गुरमति संगीत: परिचयात्मक अध्ययन

डा. हरजस कौर

गुरमति संगीत: परिचयात्मक अध्ययन

डा. हरजस कौर
लैक्चरार संगीत,

खालसा कालेज,
पटियाला

संगीत प्रकाशन,
11-फोंट बाजार
पटियाला

GURMAT SANGEET : PRICHATMAK ADHIYAN

By

Dr. Harjas Kaur

©

Dr. Harjas Kaur

(Lecturer in Music)

Khalsa College Patiala

1993

मूल्य : 70-00 रुपये

संगीत प्रकाशन

11 फोरट बजार

पटियाला

छापक : पलैटीनम प्रिंटरज़, 609/3 खालसा मुहल्ला, पटियाला

प्रस्तावना

गुरमति संगीत की पहचान को सुदृढ़ करने के लिए किए जा रहे प्रयत्नों में इस परम्परा का अध्ययन विशिष्ट एंव वर्णीय विकास अवस्था में से गुजर रहा है। इस विकास प्रक्रिया में सदियों का ऐतिहासिक विकास निहित है। गुरमति संगीत परम्परा का यह अध्ययन गुरमति संगीत के लिए ही नहीं बल्कि पंजाब की शास्त्रीय संगीत परम्परा, लोक संगीत परम्परा और धार्मिक संगीत परम्परा की अलग-अलग धाराओं की मूल पहचान के लिए भी अति अनिर्वायणीय है। इसी दृष्टिकोण से गुरमति संगीत का अध्ययन भारतीय संगीत परम्परा के लिए भी विशिष्ट महत्व रखता है। खेद की बात है कि विश्व संगीत के अध्ययनकार अपनी अनभिज्ञता के कारणवश इस परम्परा के बार के विश्लेषण कार्य प्रति शून्य प्रतीत होते हैं। भारतीय संगीत के इतिहात में भी पंजाब की संगीत परम्परा को एक दो पन्नों व गुरमति संगीत परम्परा को एक दो पंक्तियों में समेट दिया जाता है। इस लिए इन संदर्भों में गुरमति संगीत परम्परा का अध्ययन ओर अधिक महत्वपूर्ण अनिवार्य हो गया है।

हर्ष की बात है कि संगीत के कुछ नव खोजार्थी गुरमति संगीत के प्रति आकर्षित हो रहे हैं और इस विषय पर लिखित रूप में सामग्री भी उपलब्ध होने लगी है। नि: संदेह इन अध्ययनकारा के अध्ययन व खोज का मार्ग इतना सूगम नहीं। इन अध्ययनकारों को गुरमति संगीत की व्यवहारिक परम्परा जो सीना-ब-सीना चली आ रही है की मूल सामग्री को सावधानो से विश्लेषित करना है क्योंकि इस अध्ययन सामग्री की प्रमाणिकता के बीज गुरमति संगीत के आधार ग्रंथ श्री गुरू ग्रंथ साहिब में निर्देशित व निर्धारित गुरमति संगीत प्रबन्ध में निहित हैं। यह संगीत प्रबन्ध श्री गुरू ग्रंथ साहिब के अन्तरिम हवाले, संकतों व सिरलेखों से

निर्मित होता है जिसको गुरमति संगीत की व्यवहारिक परम्परा के प्रवाह से सूक्ष्म दृष्टि से पहचाना जा सकता है। इस कार्य के लिए संगीत शास्त्र, भारतीय व पंजाब संगीत के इतिहास और श्री गुरू ग्रंथ साहिब के रचनाकार, गुरूओं अथवा संत भक्तों की वाणी में गम्भीर अध्ययन बुनियादी तौर पर आवश्यक है।

'गूरमति संगीत : पस्चियात्मक अध्ययन' पुस्तक की लेखिका डा० हरजस कौर का यह कार्य गुरमति संगीत के शोधार्थियों में प्रारम्भिक व प्रमाणिक कार्य कहा जा सकता है। इस कार्य में भारतीय संगीत व गुरमति संगीत परम्परा की तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से विवेचन की झलक मिलती है। लेखिका ने इस विषय पर स्थापित खोजकारों व गुरमति संगीत पर उपलब्ध सामग्री को सूक्षम दृष्टि से विश्लेषित किया है और इस पुस्तक में विभिन्न विषयों पर खोज निबंध प्रस्तुत किए हैं। इस पुस्तक की प्रमुख विशिष्टता गुरमति संगीत के लिए गुरू (सिक्ख गुरूओं व वर्तमान समय में श्री गुरू ग्रंथ साहिब) द्वारा प्रदान की गई मति/सिद्धान्त का पालन व अनुसरण है। जिसको लेखिका ने व-खुबी निभाया है। वर्तमान गुरमति व संगीत के अध्ययन के लिए ऐसी दृष्टि की हमें बहुत आवश्यकता है। गुरबाणी अध्ययन को इसके मौलिक प्रसंग में गुरू व संचार की भूमिका को पहचानने के लिए गुरमति संगीत का ऐसा अध्ययन सभी अध्ययनकारों के लिए लाभकारी होगा। इसी आशा के साथ संगीत/ गुरमति संगीत के लिए शोधार्थियों, विधार्थियों व पाठकों के लिए यह पुस्तक भेंट करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

डा० गुरनाम सिंह
अध्यक्ष संगीत विभाग,
गुरू नानक देव युनीवर्सिटी
अमृतसर

दो शब्द

भारतीय शास्त्रीय संगीत अपने विकास के दौरान वैदिक काल में मंदिरों से मुगल काल के महलों तक पहुंचा और अध्यात्मक पवित्रता को छोड़ कर अश्लीलता का रूप धारण कर चुका था। सिखों के पहले गुरूबाबा नानक ने अपनी इलाही बाणी का उच्चारण, संगीत का सहारा लेकर इस कला की पवित्रता को न केवल सजीव किया बल्कि उस समय के प्रचलित रागों को भाई मरदाने के रबाब की मधुर सुरावलियों द्वारा प्रचलित किया। गुरू अर्जुन देव जी का गुरूओं की बाणी और भारतीय रागों को श्री गुरू ग्रंथ साहिब में सम्मिलित करके इनहें सुरक्षित रखना एक महान कार्य है। 'गुरबाणी' को रागों और परम्परागत कीर्तन विधि द्वारा गायन करना गुरमति संगीत की पहचान है। गुरमति संगीत का आधार है:- भारतीय संगीत। लेकिन ऐसे समय में यह एक नवीन संगीत पद्धति का स्थान ग्रहण कर चुकी है। गुरमति संगीत में विभिन्न गायन शैलीयां विशेषकर पड़ताल, लोक संगीत, संगीत-शब्दावली आदि की आधार निधि उपलब्ध है। 'गुरमति संगीत : परिचयात्मक अध्ययन' पुस्तक में लेखिका ने भारतीय शास्त्रीय संगीत और गुरमति संगीत के विभिन्न पहलुओं पर जिस प्रकार अपने विचार सरल भाषा में सुन्दर और सुगठित ढंग से विस्तार पूर्वक व्यक्त किए हैं वह प्रशंसनीय है। मैं उनके इस महत्वपूर्ण कार्य पर हार्दिक बधाई देते हुए उम्मीद करता हूं कि यह पुस्तक विद्यार्थियों और अध्यापको के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

★ एस०एस० करीर
पी० ई० एस० (रिटायर्ड)
● भूतपूर्व अध्यक्ष,
पोस्ट ग्रैजुएट संगीत विभाग,
गर्वनमैंट कॉलेज फार विमैन पटियाला और
गर्वनमैंट कॉलेज फार विमैन अमृतसर
● भूतपूर्व चेयरमैन
पोस्ट ग्रैजुएट बोर्ड ऑफ स्टडीज इन म्यूज़िक
गुरू नानक विश्वविद्यालय अमृतसर और
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

आदिका

संगीत जगत में गुरमति संगीत की स्वतन्त्र पहचान, स्थान व प्रचलन संगीत आचार्यों एवम आविष्कारकों के लिए उत्साहवर्धक है। इस संगीत प्रबन्ध का आधार स्रोत सिक्ख धर्म के मूल ग्रंथ श्री गुरू ग्रंथ साहिब हैं। नि: संदेह यह ग्रंथ संगीत की सैद्धांतिक परम्परा की व्यख्या नहीं करते और न ही इसमें स्वतन्त्र व स्पष्ट रूप में गुरमति संगीत के सिद्धांत व शास्त्र का उल्लेख है। फिर भी इस ग्रंथ की संगीत में संपादना और विभिन्न संगीत संकेत, सिरलेख व फरमान एक निश्चित गुरमति संगीत प्रबन्ध का निर्धारण करते हैं। इस लिए श्री गुरू ग्रंथ साहिब को ही गुरमति संगीत प्रबन्ध के आधार व स्रोत के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। गुरमति संगीत प्रबन्ध को जिन संगीत तत्वों के आधार पर हम विश्लेषित कर सकते है वह संगीत तत्व व तकनीकी संगीतक शब्दावली हमें भारतीय संगीत विशेष कर उत्तरी भारतीय संगीत (हिन्दुस्तानी संगीत) से प्राप्त होती है। बेशक इस प्रयोग की विधि और विधान में मौलिकता स्पष्ट रूप में उजागर होती है।

प्रत्येक संगीत विद्यार्थी का कर्तव्य है कि वह किसी भी परम्परा के अध्ययन के लिए संगीत वैज्ञानिक दृष्टिकोण का धारणी हो। यह धारणा भी मान्य है कि हम गुरमति संगीत के स्वतन्त्र सरूप की स्थापना भारतीय संगीत से तुलानात्मक आधार पर ही कर सकते है। पूर्व अंकित विचारों और निर्धारित दृष्टिकोण के आधार पर ही हमने 'गुरमति संगीत : परिचयात्मक अध्ययन' नामक पुस्तक के अन्तर्गत विभिन्न विषयों पर खोज निबंध प्रस्तुत किए है। इस कार्य को हमने निम्नलिखित छः खोज निबंधों में विभक्त किया है जो हमारे खोज विषय के अध्ययन का निर्माण करने में सहायक होते हैं।

प्रथम अध्याय 'गुरमति संगीत : उत्पत्ति और विकास' शीर्षक के अन्तर्गत संगीत की प्रारम्भिक जान-पहचान, इसकी उत्पत्ति और विकास को क्रमशः विधि द्वारा दर्शाने की कोशिश की है। गुरमति संगीत की पहचान को उजागर करने वाले बुनियादी तत्व हमारे अध्ययन का विशेष आधार हैं। इस लिए हमने दूसरे निबंध 'गुरमति संगीत प्रबन्ध की विलक्षणता' से इस संगीत परम्परा की विलक्षणताओं को क्रमशः विश्लेषित करने का प्रयत्न किया है। इसी दृष्टि से गुरमति संगीत प्रबन्ध की कार्यशीलता को पहचानने की कोशिश की है। 'गुरमति संगीत का राग प्रबन्ध' नामक तीसरा खोज निबंध है जिसमें गुरमति संगीत के राग प्रबंध को अध्ययन का विषय बनाया गया है। इसमें गुरमति संगीत के राग प्रबन्ध का सिद्धान्त और स्वरूप व्याख्या सहित प्रस्तुत किया है। इसमें हमारे अध्ययन का आधार स्रोत मध्यकलीन शास्त्रीय संगीत, मध्यकालीन संगीत ग्रंथ, सिक्ख धर्म से सम्बन्धित हवाला ग्रंथ और गुरमति संगीत, भारतीय सगीत की क्रियात्मक परम्परा है। इसमें गुरमति संगीत की मौलिकता और विलक्ष्णता को उजागर करते हुए इसकी विलक्षणता को निरूपित किया गया है। 'गुरमति संगीत में प्रयुक्त गायन रूप/शैलीयां' इस पुस्तक का चौथा खोज निबंध है इसमें श्री गुरू ग्रंथ साहिब में प्रयुक्त समूह गायन शैलियों का अध्ययन सर्व प्रथम विषय और स्वरूप के तौर पर वर्गीकरण से आरम्भ है। इसके उपरांत समूह शैलियां (शास्त्रीय + लोक) की क्रियात्मक स्वरूप में स्वर लिपियों का वर्णन है। 'गुरमति संगीत में प्रचलित कीर्तन चौकीयां' को हमने अपने पांचवे निबंध का विषय बनाया है। सिक्ख धर्म व सिक्ख समाज में विभिन्न रस्मों, रीति रिवाजों और मौसमों से सम्बन्धित कीर्तन परम्परा (चौकीयां) निरन्तर विकास अधीन कार्यशील है। इस निबंध अन्तर्गत हमने चौकी की परिभाषा, स्वरूप व विभिन्न कीर्तन चौकीयों का वर्णन व विश्लेषण किया है।

अंतिम खोज निबंध 'गुरमति संगीत में भारतीय शास्त्रीय संगीत के तत्व' के अन्तर्गत गुरमति संगीत में प्रयुक्त भारतीय शास्त्रीय संगीत के

विभिन्त तत्वों का विश्लेषण किया है। इस विश्लेषण का आधार जहां पहले गुरमति संगीत के साथ सम्बन्धित भारतीय शास्त्रीय संगीत के तत्वों का प्रयोग दर्शाया है वहां इसके साथ ही इसका भारतीय शास्त्रीय संगीत में स्वरूप और सिद्धान्तों को भी प्रगट किया है। हमारी कोशिश यही रही है कि हम निश्चित कर सकें कि भारतीय शास्त्रीय संगात के तत्वों को किस रूप और किस विधी के साथ प्रयोग किया गया है। इसके साथ ही इस प्रयोग की मौलिकता और विलक्षणता दिखाने की भी कोशिश की है क्योंकि यही विश्लेषण गुरमति संगीत की मौलिकता को पहचानने और समूह परम्पराओं को अलग करने के लिए सहायक सिद्ध होगा।

गुरमति संगीत परम्परा से सम्बन्धित होने वाले अगामी अध्ययन कार्यों के लिए यह कार्य लाभदायक सिद्ध हो और गुरमति संगीत परम्परा की स्वतन्त्र पहचान को क्रियात्मक रूप में सजीव रख सके। इसी उद्देश्य के साथ हम यह कार्य समूह संगीत प्रेमी और गुरमति संगीत प्रेमीयों की सेवा में प्रस्तुत कर रहे हैं। इस पुस्तक की प्राप्तियां और उपलब्धियां मेरे खोज निगरान, समूह ज्ञान स्रोत और विद्वान लेखकों की रचनाओं का फल है, इस लिए मैं सभी की धन्यवाद की पात्र हूं। इस पुस्तक में कई तत्व ओर अधिक खोज की मांग करते हैं। इन तत्वों को उजागर करना हमारी विशेष प्राप्ति है। इस पुस्तक में रही त्रुटियाँ किसी ना किसी रूप में मेरी अल्प बुद्धि या कार्य की सीमा के कारण हैं। अंत में मैं डा० दर्शन सिंह जी चेअरमैन, गुरू नानक सिक्ख स्ट्डीज़, पंजाब यूनीवर्सिटी चंडीगढ़ की सुयोग अगवाई के लिए अति अभारी हूं। मैं डा० गरनाम सिंह जी अध्यक्ष संगीत विभाग, गुरू नानक देव युनीवर्सिटी, अमृतसत की क्रितज्ञय हूं जिन्होंने इस कार्य को सफलता सहित सम्पन्न करने के लिए मुझे अपनी निजी पुस्तकालय, मूल संगीत प्रतियां **(Manuscrit)**, रिकार्डिगज़ आदि सुनने व प्रयोग करने की अनुमति दी। इसके इलावा इनके द्वारा दी गई खोज सामग्री

व खोज दृष्टि मेरे कार्य की सफलता की मूल आधारशिला हैं। इसके साथ ही प्रिंसीपल शमशेर सिंह जी करीर जिन्होंने इस कार्य को सम्पूर्ण करने के लिए मुझे भरपूर निर्देशन दिया। मेरे माता पिता और पति स० कंवर हरमिन्द्र सिंह जी भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने जीवन के बेहतरीन समय में मुझे इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए परिवारिक जिम्मेदारियां अपने सिर ली। खास तौर पर मेरे माता जी जिन्होंने कैंसर के मरीज होते हुए भी इस कार्य के दौरान मेरी बेटी का पालन पोषण किया।इस सारे कार्य दौरान मेरे पिता जी (ससुर) स०दलीप सिंह वंदा मेरी प्रेरणा के स्रोत रहे इस लिए मैं उनकी भी अति अभारी हूं। गुरू नानक के अलाही नाद से उतपन्न गुरमति संगीत की गहराई पा सकना मेरे जैसी अलप बुद्धि के लिए कठिन व असम्भव था फिर भी गुरमसि संगीत से सम्बन्धित यह तुच्छ सा प्रयास आप सभी की सेवा में प्रस्तुत है।

डा० हरजस कौर,
लैक्चरार संगीत,
खालसा कालज,
पटियाला

पाठ-सूची

1.	गुरमति संगीत : उत्पत्ति और विकास	9
2.	गुरमति संगीत प्रबंध की विलक्षणता	35
3.	गुरमति संगीत का राग प्रवन्ध	53
4.	गुरमति संगोत में प्रयूक्त गायन रूप/शैलियां	67
5.	गुरमति संगीत में प्रचलित कीर्तन चौकोयां	87
6.	गुरमति संगोत में भारतोय शास्त्रीय संगीत के तत्व	101
7.	अंतिका—1	126
8.	अंतिका—2	143

गुरमति संगीत : उत्पत्ति और विकास

गुरमति संगीत : उत्पत्ति और विकास

गुरमति संगीत भारतीय संगीत की एक निवेकली और विलक्षण परम्परा है। यह सिक्ख धर्म द्वारा प्रवाणित और प्रमाणिक व्यवहारिक परम्परा के तौर पर मूर्तिमान होती है। इस परम्परा की व्यवहारिकता इसकी विशिष्ट सैद्धांतिकता पर आधारित है, जिसके विकास का निजी, विलक्षण और मौलिक इतिहास है। इस संगीत परम्परा का आरम्भ सिक्खों के प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी द्वारा हुआ। श्री गुरु नानक देव जी ने सिक्ख धर्म के प्रचार हित वाणी और संगीत को संचार के लिए प्रयोग किया। वाणी और संगीत के सुमेल की यह परम्परा भारतीय धर्मों में वहुत पुरातन है। भारतीय परम्परा के अनुसार श्री गुरु नानक देव जी से पूर्व धर्म और संगीत का अलग से अंतरीवी सम्वन्धों के आरम्भ का प्रमाणिक स्रोत वेद ग्रंथ ही स्वीकार किये जाते हैं। इसके इलावा क्योंकि भारतीय मत में संगीत की उत्पत्ति का आधार भी धार्मिकता ही स्वीकार किया जाता है। इसीलिये विद्वान संगीत को आध्यात्मिक पृष्ठभूमि के अनुसार वैदिक काल के साथ जोड़ते हैं। परन्तु वैदिक काल से पूर्व मानव भिन्न-भिन्न विधियों द्वारा जो पूजा करता था उसमें भी संगीत का प्रयोग किया जाता था। यह तथ्य सर्व प्रवाणित है चाहे इसके स्वरूप सम्वन्धी निश्चित व प्रमाणिक तौर पर कहना कठिन है। इस तरह हम यह कह सकते हैं कि वैदिक काल से पूर्व और वाद में संगीत भारतीय आध्यात्मिक परम्परा का अंग रहा है। वैदिक काल से लेकर श्री गुरु नानक देव जी के समय तक की संगीत की विभिन्न धाराएँ और परम्पराएँ प्रचार में रही हैं। मुख्यता इस समय के संगीत को हम मार्गी और देशी नामक दो धाराओं के अनुसार विभाजित कर सकते हैं।

हो प्राप्त हुआ है क्यों कि यह परम्पराएं मूल रूप में अपने-अपने धर्म परम्परा के साथ जुड़ी हुई हैं। इसके साथ आध्यात्मिक संगीत को इन परम्पराओं में कुछ परम्पराओं ने अपने धार्मिक संगीत द्वारा विलक्षण पहचान भी बनाई है जिनमें से 'गुरमति संगीत' एक है। गुरमति संगीत परम्परा ने भी एक सुनिश्चित विधि पूर्वक और वैज्ञानिक आध्यात्मिक संगीत प्रबन्ध की भी सिरजना की जो हमारी खोज का विषय है। इससे पहले कि हम इस परम्परा की उत्पत्ति, विकास और प्रबन्ध से सम्बन्धित कुछ विचार करें, इस परम्परा से पूर्वकालीन और समकालीन अध्यात्मिक संगीत परम्पराओं का संक्षिप्त रूप में अध्ययन करना अनिवार्य प्रतीत होता है।

गुरमति संगीत की पृष्ठभूमि :—

गुरमति संगीत की पृष्ठभूमि पर एक विशाल और प्राचीन भारतीय परम्पराओं का विशाल इतिहास मौजूद है। संगीत के संदर्भ में इस परम्परा के हवाले इतिहास, संगीत इतिहास, संगीत की सैद्धांतिक परम्परा और इसकी सजीव क्रियात्मक परम्परा से उपलब्ध हैं।

वैदिक संगीत भारतीय संगीत परम्परा का आरम्भिक श्रोत स्वीकार किया जाता है। चार वेदों में से सामवेद का सम्बन्ध गायन अथवा संगीत से है। इन वेद मंत्रों के उच्चारण एंव गायन प्रक्रिया को, स्वर, सप्तक लय व ताल के प्रथम प्रमाण को आधार के रूप में माना जाता है। इसी तरह रामायण महाभारत में संगीत का वर्णन उस काल की विशाल संगीतिक परम्परा का दस्तावेज है।

हिन्दु धर्म के अतिरिक्त बुद्ध व जैन धर्म में भी संगीत का प्रचलन था। बुद्ध धर्म के साहित्य में गायन, वादन, नृत्य, संगीतकार और विभिन्न वाद्यों का जिकर मिलता है।[10] बुद्ध धर्म के साहित्य के गायन हित 'थेर गाथा' और 'थेरी गाथा' शैलियों का प्रयोग किया जाता था। जैन धर्म में वंदना, पूजा पाठ के लिए विभिन्न रचना जैसे ध्रुपद, टेक, चारकड़िया, रग तलंगड़ा, लावना, दोहा शेरगजल, कवित, मतगयद, कवित मनहर, इकतीस मात्रा की सरया, दो मात्रा का सवैया, छपय, चौपई, सुदरी, भुजग प्रयात छंद आदि प्रचार में है।[11] जैन धर्म की

पाल्हणपुर मंडन, पाशर्व मनन, कृति कुसुमांजली ग्रंथों में दर्ज रचनाएं, राग अंक सहित अंकित हैं।

इसी तरह आठवीं और नौवीं शताब्दी में सिद्ध और नाथ सम्प्रदा में संगीत का प्रचलन व बाणी में रागों का उल्लेख वर्णन है। वज्रयानी सिद्ध तांत्रिक साधना के लिए शुद्ध रागात्मक विधियों का प्रयोग करते थे।[12] इसमें पदियों का गायन सरल भाषा में लोक गायन रूपों का धारणी हो कर सर्व साधारण में प्रचलित थे। रामकली राग नाथ परम्परा का प्रिय राग है। इस का उल्लेख 'गोरखबाणी' में विशेष रूप में है।[13] इसके इलावा गौड़, मारू, गूजरी, पटमंजरी, देवक्री, देसाख, भैरवी, कामोद, धनासरी, सिवार (आसावरी), वराटी, मलारी, मालश्री मालसा गौंड आदि रागों के प्रयोग उपलब्ध हैं

वैष्णव मत जो कि वासदेव, सातवत, भागवत आदि नामों के साथ जाना जाता है, लगभग पांचवी शताब्दी में आरम्भ हुआ। वैष्णव संतों को 'अलवार' कहा जाता था। यह चलते फिरते गवैये थे जो कि एक मन्दिर से दूसरे मन्दिर में जाते, प्रभु के गुन गान करते यात्रा करते थे। भक्ति और भक्ति संगीत के विकास में दक्षिण के बारह वैष्णव अलवारों की देन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इस परम्परा के महान प्रचारक रामानुजचार्य हुए हैं। रामानुजचार्य के इलावा रामानंद, निम्बारक, माध्वाचार्य के लगातार प्रयत्नों के कारण चौदहवीं, पंद्रहवीं शताब्दी में यह उत्तरी भारत में भी प्रचलित हो गई। बाहरवीं शताब्दी में जैदेव द्वारा रचित 'गीत गोविंद' इस परम्परा की महान रचना है। यह ग्रंथ जहां काव्य पक्ष से विशेष है, वहां संगीत पक्ष से भी महत्वपूर्ण है। इन्होंने विभिन्न रागों में अपनी बाणी का उच्चारण किया। श्री गुरू ग्रंथ साहब में भी जैदेव द्वारा रचित रचनाएं राग गूजरी,[14] राग मारू[15] अधीन दर्ज है।

शिव भक्त जो 'शैव' या 'नाइनार' नाम से जाने जाते हैं। शिव मत में भी राग-बद्ध विशेष संगीतिक रचनाओं का प्रचलन रहा है। इन नाइनार संतों की कई रचनाएं 'त्रीमुराये' नामक ग्रंथ में अंकित हैं। यह रचनाएं रागात्मक स्वरूप की धारणी हैं जिनका शिव भगतों द्वारा

विशिष्ट संगीत बन्धेज अनुसार राग, ताल सहित गायन किया जाता है।

चैतन्य या गौड़ीय सम्प्रदाय की स्थापना चैतन्य महाप्रभु ने की, जिसके अधीन राम कृष्ण दोनों की भक्ति की जाती थी। इस सम्प्रदाय में भक्ति गायन विधि संकीर्तन का प्रयोग किया जाता था। संकीर्तन को उपयोगी बनाने का श्रेय चैतन्य महाप्रभु के ऊपर है।[10] नाम कीर्तन बहुत सरल है, इसका बंगाल में बहुत महत्व है।[11]

हिन्दुस्तान में सातवीं-आठवीं शताब्दी के पश्चात् मुसलमान हमलावर पहले पंजाब में आये और फिर सारे भारत में धीरे-धीरे आगे बढ़े। मुसलमानों के आगमन के साथ सूफी फकीर अपनी सूफी फ़िलासफी लेकर आये। सूफी मत इस्लामिक शरा के बन्धनों की कट्टरता का धारणी नहीं था। सूफ़ीयों ने अपने मत के प्रचार के लिए 'सूफ़ीयाना कलाम' की रचना की और संगीत को माध्यम बनाया। सूफ़ी मत को सूफ़ी कवि और संगीत द्वारा सूफ़ीयाना अंदाज़ में प्रस्तुत ही 'सूफ़ी संगीत' है। सूफ़ीयों ने अपनी वाणी की संगीतिक प्रस्तुति के लिए निबद्ध और अनिबद्ध दोनों प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया। निबद्ध गायन शैलियां जो विशिष्ट ताल के नियमों के साथ बंधी हुई हैं, जैसे काफ़ी और कव्वाली। अनिबद्ध गायन शैलियां ताल के बधंन से आज़ाद होती हैं। सूफ़ी संगीत में सीहरफी, दोहड़े, श्लोक गायन शैलियां अनिबद्ध का रूप हैं।

भक्ति लहर मध्यकाल का एक विशाल आन्दोलन है जिसने भारतीय अध्यात्मिक, सामाजिक और राजनीतिक चेतना को प्रभावित करते हुए इसे नवीन सात्विक मूल प्रदान किए। भक्ति लहर का आरम्भ एक धार्मिक आन्दोलन के रूप में हुआ। इसके अन्तर्गत प्रयोग किये गए कवि को 'भक्ति कवि' कहा जाता है और भक्ति कवि की प्रस्तुति के लिए प्रयोग किये गये संगीत को 'भक्ति संगीत' के नाम से जाना जाता है।

रामानुजचार्या के परोकार रामानन्द को भक्ति लहर के प्रथम प्रचारक माना जाता है। रामानन्द पहले सगुणवादी वैश्ण थे। रामानंद के शिष्य वैरागी या सगुण भक्ति के अनुसार अनंता नंद,

सुखानंद, योग नंद आदि के अतिरिक्त तुलसीदास जी का नाम प्रसिद्ध है जिनके कवि की संगीतिक महानता विशेष है। इस परम्परा के अंतर्गत 'संत' भक्त जनों में राम की निर्गुण भक्ति की जाती थी जिसका प्रचार कबीर, रविदास आदि ने किया। रामानुजचार्या के साथ सम्बन्धित भक्तों की रचनाओं के ऊपर राग सिरलेख के तौर पर अंकित है। उन्होंने अपने पदों को विशिष्ट संगीत नियमों सहित रागों के अंतर्गत गाया और प्रचार किया।

वल्लभ साम्प्रदाय के अंतर्गत कृष्ण भक्ति, संगीत के विशेष नियमानुसार की जाता थी। अष्टछाप कवियों[1] ने ब्रज भाषा में प्रबन्ध, पद और भजन शैली की रचना की, जिन पर राग आदि शास्त्रीय संकेत भी हैं जो सम्बन्धित राग अधीन गायन करने का सूचक है। इस परम्परा के प्रसिद्ध भक्त कवि गायक सूरदास और मीरा का नाम विशेष है। कृष्ण की लीला के कीर्तन को रास या लीला का नाम दिया जाता है। यह कीर्तन परम्परा भी वल्लभ साम्प्रदाय ने ही की थी। इस कीर्तन विधि में शास्त्रीय संगीत के विशेष नियमों का खास ध्यान रखा गया है। वल्लभ साम्प्रदाय में आचार्य द्वारा अष्टछाप कीर्तन प्रणाली का खूब प्रचार हुआ।

सखी साम्प्रदाय के संस्थापक स्वामी हरिदास जी माने जाते हैं। जिन्होंने राधा कृष्ण की युगल जोड़ी की पूजा की। संगीत जगत में स्वामी हरिदास जी महान् संगीताचार्य थे। आपने अलग-अलग रागों के अंतर्गत पदों की रचना की जो आधुनिक समय ध्रुपद गायन शैली के उत्तम नमूने के तौर पर प्रसिद्ध हैं। तानसेन, बैजू बावरा, रामदास, गोपाल नायक जैसे महान संगीतकारों ने संगीत का वरदान आप से प्राप्त किया। सखी साम्प्रदाय के अधीन भारतीय संगीत की विशेष व्यक्तिगत पद कीर्तन शैली का खूब प्रचार हुआ। पद कीर्तन शैली कठोर नियमों की धारणी होने के कारण व्यक्तिगत गायन विधि अधिक प्रचार में थी। इस शैली द्वारा मध्यकालीन भक्त स्वामी हरिदास के इलावा गुरु साहिबान ने भी अपनी वाणी का गायन किया।

सिक्ख धर्म में संगीत का प्रमुख स्थान है। इस धर्म में संगीत को एक विशिष्ट संचार माध्यम के तौर पर स्वीकार किया है। इस

धर्म का आरम्भ श्री गुरु नानक देव जी से हुआ। भक्ति लहर के निकटवर्ती प्रभावों के कारण कुछ विद्वान जाने अनजाने श्री गुरु नानक देव जी को भक्ति लहर के प्रचारक के रूप में प्रस्तुत करते हैं परन्तु यह धारणा उचित नहीं लगती बल्कि श्री गुरु नानक देव जी ने पूर्व भारतीय धर्मों और भक्ति लहर जैसी धार्मिक प्रणालियों और प्रवृत्तियों के चिंतन उपरांत सिक्ख धर्म की स्थापना की और इसे एक धर्म के रूप में प्रचार किया। उन्होंने वाणी के गायन प्रचार के लिए कीर्तन को माध्यम बनाया। इस कीर्तन की विधि को शब्द और संगीत के साथ जोड़ा गया। शब्द-कीर्तन के इस समुच्च विधि विधान और प्रस्तुति प्रक्रिया को 'गुरमति संगीत' के रूप में जाना जाता है। इस सम्बन्धी सिक्ख धर्म के आधार ग्रंथ 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' हमारे पास एक प्रमाणिक स्रोत के रूप में विद्यमान हैं। इसमें श्री गुरु नानक देव जी, गुरु अंगद देव जी, गुरु अमर दास जी, गुरु राम दास जी गुरु अर्जुन देव जी और श्री गुरु तेगबहादर जी के अतिरिक्त संतों, भक्तों, भट्टों की वाणी भी अंकित है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में संगीतक पक्ष से वाणी का सिद्धांतिक और व्यवहारिक रूप में पालन करने के लिए वाणी पर राग, रहाओ, अंक, घर आदि संगीतक संकेत विद्यमान हैं। इस प्रबन्ध अनुसार व्यवहारिक परम्परा मौजूद है, जिसका आधुनिक समय में भी प्रचार है।

गुरमति संगीत की उत्पत्ति :—

सिक्ख धर्म में संगीत के प्रयोग को अधिक करके आम दृष्टिकोण से ही देखा जाता है जबकि यह प्रयोग एक सुनिश्चित और विशिष्ट परम्परा के निर्माण का आधार है। इस लिए सिक्ख धर्म में संगीत के प्रयोग को अत्यन्त सूक्ष्म और वैज्ञानिक तौर से अध्ययन का विषय बनाने की आवश्यकता है। श्री गुरु नानक देव जी ने शब्द और संगीत को संयुक्त और सम्मिलित रूप में प्रयोग किया है। यहां यह वर्णन करना भी उचित लगता है कि श्री गुरु नानक देव जी से पूर्व भारतीय धर्मों में संगीत का प्रयोग होता रहा है। यदि श्री गुरु नानक देव जी ने इसका इस्तेमाल किया तो इसमें कौन-कौन सी विलक्षणताएँ विद्यमान थी और वह कौन से गुण हैं जो इससे पूर्व और समकालीन आध्यात्मिक संगीत परम्पराओं के साथ को अलग करते हैं। यह विषय

स्वतंत्र अध्ययन का विषय है जिसे हम अपने खोज कार्य के दौरान भिन्न-भिन्न विधियों द्वारा ढूंढने का प्रयत्न करेंगे। सर्वप्रथम हम इस गुरमति संगीत की उत्पत्ति के संबंध में विचार करेंगे जो इस विषय सम्बन्धी बुनियादी तौर से महत्वपूर्ण है। सिक्ख इतिहास के प्रसंग में देखिए तो समकालीन धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक हालातों की सूक्ष्म दृष्टि, गहरे चिंतन और बोध श्री गुरु नानक देव जी के आरम्भिक जीवन से प्रत्यक्ष होता है। इसके साथ ही पूर्व धर्म और उनके फलसफे को भली-भांति पहचानते हुए श्री गुरु नानक देव जी ने एक नवीन पंथ की स्थापना की ओर कदम उठाया जो पूर्व और समकालीन धर्मों से अलग था। इस धर्म की सैद्धांतिक व्याख्या और विश्लेषण से गुरेज करते हुए विषय की सीमा को मुख्य रखते हुए हम गुरमति संगीत की उत्पत्ति को श्री गुरु नानक देव जी की वाणी सृजन प्रक्रिया के साथ जोड़ते हैं। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने आपको खसम का ढाढी[10] कहते हुए उस परमात्मा के आदेश[20] को लोगों तक संचारित करने के लिए शब्द-कीर्तन को माध्यम बनाया। इस शब्द कीर्तन में संगीत द्वारा खसम की बाणी[21] को सर्व लोगों तक संचारित करने के लिए मौलिक और विलक्षण रूप में इस्तेमाल किया गया है। आपजी बाणी की आमद और बाणी की प्रस्तुति दोनों में संगीत का विशेष स्थान है।

श्री गुरु नानक देव जी ने बाणी की प्रस्तुति के लिए संगीत का साथ करने के लिए भाई मरदाने को अपना साथी चुना। भाई मरदाना गुरमति संगीत परम्परा के प्रमुख आचार्य हुए हैं। भाई मरदाना उस समय के उच्च कोटि के रबाब वादक थे जिनके रबाब वादन के बारे में भाई गुरदास जी ने कहा है :

भला रबाब वजांएदा मजलस मरासी मरदाना ॥[22]
ऐकि बाबा अकाल रूप दूजा रबाबी मरदाना ॥
दिती बांग निमाजि करि सुन समानि होआ जहाना ॥[23]

श्री गुरु नानक देव जी जब शब्द का गायन करते तो भाई मरदाना रबाब द्वारा उनका साथ करते। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग बिहागड़ा के अन्तर्गत 'स्लोक मरदाना' शीर्षक के अन्तर्गत दो श्लोक

अंकित हैं।[24] भाई मरदाना जी ने श्री गुरु नानक देव जी का सबसे ज्यादा साथ निभाया। श्री गुरु नानक देव जी ने आपको बख्शिश करते हुए कहा कि "मरदाना! जहां पर तुम्हारा वासा, वहीं मेरा वासा॥"

श्री गुरु नानक देव जी ने भाई फिरंदा (जो भाई फेरू के नाम से भी प्रसिद्ध था) से गुरमति संगीत के प्रचार के लिए रबाब बनवाया। यह भी कहा जाता है कि भाई मरदाना जी ने भाई फिरंदा से राग विद्या की शिक्षा ली।[25]

श्री गुरु नानक देव जी का भाई मरदाने को एक साथी के रूप में चुनना और प्रथम उदासी समय ही भाई मरदाने के लिए एक विशेष प्रकार का रबाब तैयार करवाना। इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि श्री गुरु नानक देव जी ने शब्द और संगीत द्वारा लोकाई को सोधने[26] की प्रक्रिया आरम्भ की।

श्री गुरु नानक देव जी की सृजन प्रक्रिया और संगीत के गहरे घनिष्ठ सम्बन्ध के अनेक प्रमाण जन्मसाखियों में उपलब्ध होते हैं।[27]

इन प्रसंगों से स्पष्ट है कि श्री गुरु नानक देव जी के बाणी उच्चारण समय संगीत एक माध्यम के रूप में आप सुहारे ही ध्वनीमान होता है। यहां शब्द और संगीत अलग-अलग नहीं लगते बल्कि यह बाणी रूप शब्द और संगीत की संयुक्त-सम्मिलित पेशकारी के रूप में प्रभु कीर्तन के रूप में मूर्तिमान हो रहा है। इस तरह श्री गुरु नानक देव जी की बाणी सृजन प्रक्रिया और इसकी प्रथम प्रस्तुति गुरमति संगीत परम्परा की उत्पत्ति का केंद्रीय और प्रथम स्रोत या बिन्दु है। यह प्रक्रिया या प्रस्तुति को भाई मरदाना और उसके रबाब द्वारा रबाब के साधनों द्वारा श्री गुरु नानक देव जी ने सचेत रूप में साधक माध्यम के रूप में अपनाया है। बाणी की यह प्रस्तुति/पेशकारी गुरमति संगीत की उत्पत्ति के प्रवाह को और आगे ले जाती है।

श्री गुरु नानक देव जी जब भी कहीं नवीन अस्थान पर जाते वहां सर्वप्रथम शब्द कीर्तन की धुन गुंजारित करते।

इस संबंध में भी अनेक साखियां[28] उपलब्ध होती हैं। बाणी को यह प्रस्तुति उस स्थान के लोगों को उपदेश देने के लिए की जाती थी

और संचार का माध्यम संगीत ही था । श्री गुरु नानक देव जी की वाणी में संगीत प्रबन्ध के विविध रूपों से यह स्पष्ट है कि आपने अपनी संगत स्रोत श्रेणी के स्तर पर मानसिकता को मुख्य रखते हुए संचार की भिन्न-भिन्न गायन शैलियाँ, भिन्न-भिन्न रागों का प्रयोग किया जो इस तथ्य को और भी स्पष्ट करते हैं ।

उक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि गुरमति संगीत की उत्पत्ति श्री गुरु नानक देव जी द्वारा हुई । इस परम्परा को दृढ़ करने के लिए आपने अलग-अलग रागों में वाणी का उच्चारण किया और इसे व्यवहारिक रूप दिया ।

गुरमति संगीत का विकास :—

गुरमति संगीत सिक्खों के प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी से लेकर बाकी गुरु साहिबान के समय निरन्तर विकास का धारणी रहा है । अलग-अलग गुरु साहिबानों ने इस परम्परा में वाणी और संगीत के विभिन्न रूपों द्वारा इस परम्परा को प्रफुल्लित किया और गुरमति संगीत प्रबन्ध को व्यवहारिक क्रम द्वारा विड़ाइया, जहाँ तक कि गुरमति संगीत सिक्खी जीवन का अटूट अंग बन गया । इसके विकास की गाथा श्री गुरु नानक देव जी से प्रारम्भ होकर दस गुरुओं के जीवन काल तक फैली हुई है । यह विकास वाणी द्वारा सिरजे प्रबन्ध में भी नज़र आता है और सिक्खी जीवन के साथ संबंधित रोज़ाना जीवन के विशेष अवसरों पर इसका प्रयोग उजागर होता है । इस म्पपररा के विकास में श्री गुरु नानक देव जी और अलग-अलग गुरु साहिबानों ने विशेष योगदान दिया जिसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है ।

गुरु का नाम	कुल राग जिन में वाणी का उच्चारण किया	गायन रूप/शैलियां	कीर्तन हित प्रयोग किए गए विशेष साज़	कीर्तन केन्द्र	समकाली प्रसिद्ध कीर्तनकार ढाढी, रागी रबाबी	विशेष योगदान
श्री गुरु नानक देव जी	1. सिरी 2. माझ 3. गउड़ी (i) गउड़ी गुआरेरी (ii) गउड़ी दक्खणी (iii) गउड़ी चेती (iv) गउड़ी वैरागणि (v) गउड़ी पूर्बी दीपकी (vi) गउड़ी पूर्बी (vii) गउड़ी दीपकी 4. आसा (i) आसा काफी 5. गूजरी 6. वडहंस (i) वडहंस दक्खणी 7. सोरठि 8. धनासरी 9. तिलंग 10. सूही (i) सूही काफी 11. विलावल (i) विलावल दक्खणी 12. रामकली (i) राम कली दक्खणी 13. मारु (i) मारु काफी (ii) मारु दक्खणी 14. तुखारी 15. भैरउ 16. वसंत	अष्टपदी, पदे, वार आदि	रबाब	करतारपुर (पाकिस्तान)	भाई मरदाना	गुरमति संगीत परम्परा का निर्माण किया। आप ने उत्तरी और दक्षणी भारतीय संगीत पद्धतियों के रागों का प्रयोग करके क्रियात्मक तौर पर दोनों पद्धतियों का मेल किया।

	17. सारंग 18. मल्हार 19. प्रभाती (i) प्रभाती विभाग (ii) प्रभाती दक्खणी					
श्री गुरु अंगद देव जी	1. सिरी 2. माझ 3. आसा 4. सोरठि 5. सूही 6. रामकली 7. मारु 8. सारंग 9. मल्हार	श्लोक		खडूर साहिब	भाई मादू, बादू, रजादा, मजादा, सत्ता, बलवंड	आपने खडूर साहिब में रह कर ही पूर्ण निष्ठा और लगन सहित गुरबाणी कीर्तन को व्यवहारिक रूप में प्रचार किया।
श्री गुरु अमरदास जी	1. सिरी 2. माझ (i) गउड़ी गुआरेरी (ii) गउड़ी वैरागणि (iii) गउड़ी पूर्बी 3. आसा (i) आसा काफी 4. गूजरी 5. वडहंस 6. सोरठि 7. सूही 8. बिलावल 9, रामकली 10. मारु11. भैरउ 12. बसंत	पदे अष्टपदी, छंत, वार, सोलहे आदि	सारंदा	गोइंदवाल साहिब	भाई सत्ता भाई बलवंड भाई पांधा और भाई बूला	आपने गुरमति संगीत को प्रचार करने हित 22 मंजियां स्थापित की। आपकी रामकली राग में 'अनंद साहिब' की रचना महान है जो सिक्ख धर्म में

गुरु का नाम	कुल राग जिन में बाणी का उच्चारण किया	गायन रूप/शैलियां	कीर्तन हित प्रयोग किए गए विशेष साज़	कीर्तन केन्द्र	समकाली प्रसिद्ध कीर्तनकार ढाढी, रागी रबाबी	विशेष योगदान
	(i) बसंत हिंडोल 13. सारंग 14 मल्हार 15 प्रभाती (i) प्रभाती बिभास					नितनेम की बाणी में से किए है और प्रत्येक समागम के अंत पर इसके गायन करने की पृथा है।
श्री गुरु राम दास जी	1. सिरी 2. माझ 3. गउड़ी (i) गउड़ी गुआरेरी (ii) गउड़ी वैरागणि (iii) गउड़ी पूर्बी (iv) गउड़ी माझ 4. आसा (i) आसा काफी (ii) आसावरी 5. गूजरी 6. देवगंधारी 7. बिहागड़ा 8. वडहंस 9. सोरठि 10. धनासरी	पदे अष्टपदी पड़ताल छंत		श्री हरि-मन्दिर साहिब अमृतसर	भाई सत्ता और भाई बलवंड	आपने 'पड़ताल' नामक गायन शैली जो कि ताल पर आधारित है को जन्म दिया। भारतीय संगीत में पड़ताल गायन शैली का प्रचार दृष्टिगोचर नहीं होता

	11. जैतसरी 12. टोडी 13. वैराड़ी 14. तिलंग 15. विलावल 16. रामकली 17. नट नारायण (i) नट 18. गोंड 19. माली गउड़ा 20. मारु 21. तुखारी 22. केदारा 23. बसंत 24. सारंग 25 मल्हार 26. कानड़ा 27. कल्याण (i) कल्याण भोपाली 28. प्रभाती (i) प्रभाती बिभास	धोड़ीयां वार				लोक कवि रुप छंत श्री गुरु रामदास जी की वाणी में विशिष्ट उत्तमता की धारणी है जिन का बाद में 'आसा की वार' में गायन किया जाने लगा ।
श्री गुरु अर्जुन देव जी	1, सिरी 2. माझ 3. गउड़ी (i) गउड़ी गुआरेरी (ii) गउड़ी वैरागणि (iii) गउड़ी चेती (iv) गउड़ी पूर्बी (v) गउड़ी माझ (vi) गउड़ी मालवा (vii) गउड़ी माला 4. आसा (i) आसा काफी (ii) आसावरी 5. गूजरी 6. देवगंधारी	पदे, अष्टपदी, पड़ताल, छंत, वार,	सारंदा, तबला (जोड़ी)	श्री तरनतारन साहिब,	भाई सत्ता. भाई बलवंड, किदार, झांझू,	वर्तमान समय के गुरु श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना की. इसकी संपादना का आधार रागात्मक है, जो विश्व के धार्मिक ग्रंथों से विलक्षणता का धारणी है । 2. आपने

गुरु का नाम	कुल राग जिन में बाणी का उच्चारण किया	गायन रूप/ शैलियां	कीर्तन हित प्रयोग किए गए विशेष साज	कीर्तन केन्द्र	समकाली प्रसिद्ध कीर्तनकार ढाडी, रागी रबाबी	विशेष योगदान
	7. बिहागड़ा 8. सोरठि 9. वडहंस 10. धनासरी 11. जैतसरी 12. टोडी 13. बैराड़ी 14. तिलंग 15. सूही 16. बिलावल 17. गौंड 18. रामकली 19. नट नारायण (i) नट 20. माली गउड़ा 21. मारु 22. तुखारी 23. केदारा 24. भैरउ 25. बसंत 26. सारंग 27. मल्हार 28. कानड़ा 29. कल्याण 30. प्रभाती (i) प्रभाती बिभास (ii) बिभास प्रभाती	सोलहे, अंजुली			भूकंद	साधारण सिक्ख संगत को कीर्तन करने का आदेश दिया। आपके समय ही गुरबाणी कीर्तन क्रियात्मक तौर पर रागी रबाबी कस्बी लोक यानि मुसिखियक लोग और असिखियक साधारण सिक्ख संगत वर्गों में प्रवेश हुआ। गुरबाणी कीर्तन की (शास्त्रीय + लोक संगीत) दोनों परम्पराएं तब से अब तक उसी तरह ही चली आ रही हैं

श्री गुरु हरगोबिन्द जी	श्री गुरु ग्रंथ में साहिब अंकित नौ वारों पर धुनियों के सिरलेख अंकित किए पर इस पर विद्वानों में मतभेद है।		सारंगी ढड	कीरतपुर साहिब	भाई नत्था भाई अब्दुला भाई बाबक भाई मईया और लंब
श्री गुरु हरिराय जी और श्री गुरु हरिकृष्ण जी	श्री गुरु हरिराय जी और श्री गुरु हरिकृष्ण जी परिस्थिती अनुकूल न होने के कारण बाणी की रचना नहीं कर सके पर इन्होंने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाई हुई कीर्तन की रहु रीति को बहुत प्यार और सतिकार से कायम रखा।				
श्री गुरु तेग बहादर जी	1. गउड़ी 2. आसा (i) देवगंधार 3. बिहागड़ा 4. सोरठि 5. धनासरी 6. जैतसरी 7. टोडी 8. तिलंग (i) तिलग काफी 9. बिलावल 10. रामकली 11. मारु 12. बसंत (i) बसंत हिंडोल 13. सारंग 14. जैजावंती	पदे, अष्टपदी आदि		श्री आनंदपुर साहिब	

गुरु का नाम	कुल राग जिन में वाणी का उच्चारण किया	गायन रूप/ शैलियां	कीर्तन हित प्रयोग किए गए विशेष साज	कीर्तन केन्द्र	समकालीन प्रसिद्ध कीर्तनकार ढाढी, रागी रबाबी	विशेष योगदान
श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी	श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की रचना का संग्रह 'श्री दसम ग्रंथ' और 'श्री सरब लोह ग्रंथ' हैं। इसमें आप ने अपनी वाणी को प्रस्तुति के लिए 245 से भी ज्यादा राग और राग प्रकारों का प्रयोग किया।	पदे, पड़ताल, ख्याल, आदि	तानपुरा	मुक्तसर गुरु काशी (दमदमा साहिब)	भाई मदू और भाई सदू	श्री गुरु गोबिंद सिंह जी संत कवी, संगीतकार के साथ-साथ एक महान वीर योद्धा थे जिन्होंने अनेक दुखों को सामना करते हुए सिक्ख कौम और संगीत को नई सेध प्रदान की। आपने श्री अनंदपुर साहिब में चली आ रही सुबह-शाम गुरबाणी कीर्तन की रीति को जारी रखा। आप लाखों तुरकानी फौज के साथ अनंदपुर साहिब के किले में घिरे रहे परन्तु वहां भी अमृत समय 'आसा की वार' और संध्या

समय कीर्तन दरबार सजाते रहे। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने संगीतिक प्रतिभा और परम्परा अनुसार अपने दरबार में 52 कवि रखे थे, जो गुरमति अनुसार कविता की रचना करते थे।

उक्त विचार से स्पष्ट है कि अलग-अलग गुरु साहिबानों ने अलग-अलग रागों में वाणी का उचारण किया। उन्होंने वाणी की प्रस्तुति के लिए गुरमति संगीत प्रबंध को क्रियात्मक रूप में प्रफुल्लित करने का प्रयत्न किया। उन्होंने इस वाणी प्रधान गायकी को शास्त्रीय और लोक संगीत के विभिन्न रागों, गायन शैलियों और उपकरणों सहित विस्तृत और क्रियात्मक रूप दिया। शास्त्रीय और लोक संगीत का उक्त प्रयोग जहां गुरमति संगीत के लिए विलक्षण और लाभकारी सिद्ध हुआ वहां भारतीय शास्त्रीय परंपरा के लिए भी यह बहुत योगदान था। अलग-अलग गुरु साहिबान ने संगीत की दृष्टि से वाणी, राग, राग प्रबन्ध, विभिन्न कीर्तन गायन रूप/शैलियां, कीर्तन केन्द्र, कीर्तन का साज आदि के विकास में जो योगदान दीया उसके फलस्वरूप गुरमति संगीत हमारे पास एक बड़ी परंपरा के रूप में विद्धमान है। इसके साथ ही इस परंपरा को प्रमाणिक और स्थापित रूप प्रदान करने के लिए गुरु साहिबान ने इसको सिक्खी जीवन के रोजाना और विशेष कर विहार/उत्सवों का अभिन्न अंग बनाकर सजीव और व्यवहारिक रूप भी प्रदान किया। उक्त चर्चा के अन्तर्गत वर्णित विकास संक्षेप रूप में ही किया गया है। जोकि इस संबंधी विस्तृत अध्ययन की असीम संभावनाएं मौजूद हैं।

1. बन्धोपाध्याय, श्री पद, संगीत भाषय, पृ. 268.
2. चौधरी, विमलाकांत राय, भारतीय संगीत कोश, पृ. 63.
3. चतुर्वेदी नर्मदेश्वर. निबंध संगीत (संपा. लक्ष्मी नारायन गर्ग), पृ. 75.
4. जोशी, उमेश, भारतीय संगीत का इतिहास, पृ. 3.
5. —— वही —— वही —— पृ. 2
6. —— वही —— वही —— पृ. 9, 10
7. —— वही —— वही —— पृ. 4
8. बन्धोपाध्याय, श्री पद, संगीत भाषय, पृ. 268.
9. चतुर्वेदी नर्मदेश्वर, निबंध संगीत, (संपा. लक्ष्मी नारायण गर्ग) पृ. 75.

10. निखिल घोष, **राग-ताल के मूल तत्व और अभिनव स्वरलिपि पद्धति**, (अनु: मदन लाल व्यास), पृ. 11.
11. नरूला, डी. एस. **संगीत समीखिआ**, पृ. 256.
12. शीतल, प्रभ दयाल, **ब्रज के धर्म साम्प्रदायों का इतिहास**, पृ. 114.
13. बड़थवाल, पीताम्बर दत्त (डा.), **गोरखवाणी**, पृ. 85.
14. **आदि ग्रंथ**, पृ. 526
15. — वही —, पृ. 1106.
16. Swami Shivananda, *Bhakti and Sankirtan* Page 89.
17. Swami Prajnananada, *A Historical Study of India Music* Page 14.
18. वल्लभाचार्य के चार पुत्र और चार शिष्य क्रमवार कुंभनदास, सूरदास, कृष्णदास, परमानंद दास, गोविंद दास, छीस्वामो, नंद दास, चतुरभुज दास, अष्टछाप कवि के नाम से प्रसिद्ध हैं। साम्प्रदाय के इष्टदेव या गुरू श्री नाथ जी ने नजदीकी यह कवि, कीर्तनकार, शखाभाव से उनके प्रेम भक्ति झल्कती हैं। यह आठ भक्त कवि इतने सिद्ध और परम माने जाते थे कि श्री नाथ ने इनको अष्टसखा भी कहा है।
(**हिन्दी साहित्य कोश**), पृ. 64.
19. खालक कउ आदेसु ढाढी गावणा ॥
(वार माझ, पउड़ी २१, **आदि ग्रंथ**, पृ. 148.)
20. हउ आपहु बोलि न जाणदा,
मैं कहिआ सभ हुकमाउ जीउ ॥
(महला ५, **आदि ग्रंथ**, पृ. 763)
21. जैसी मै आवै खसम की बाणी
तैसड़ा करी गिआनु वे लालो ॥
(महला १, **आदि ग्रंथ**, पृ. 722.
22. **भाई गुरदास दीआं वारां**,
वार 11वीं, पउड़ी 13वीं

23. —— वही ——, वार पहली, पउड़ी 35वीं

24. विहागड़े की वार महला. ४. आदि ग्रंथ. पृ. 553.

25. भाई काहन सिंह नाभा, गुरशब्द रत्नाकर - महान कोश. पृ. 816.

26. बाबा पैधा सच खंड, नउनिधि नाम गरीबी पाई ॥
बाबा देखे धिआन धरि, जलती सभ प्रिथमी दिस आई ॥
बाझहु गुरु गुबार है, है है करदी सभ लुकाई ॥
बाबे भेख बनाया, उदासी की रीति चलाई ॥
चड़िआ सोधण धरत लुकाई ॥
(वार ९, पउड़ी २४)

27. बाबे कहिआ मरदानिआ रबाबु वजाइ मरदाने रबाबु वजाया ॥
रागु आसा कीया (11) बाबे शब्द बोलिआ ॥
॥ रागु आसा ॥
जिन सिरि सोहनि पटीआं मांगी पाइ संधूरु ॥
... ...
जो तिसु भावे सो थीऐ नानकु किआ मानुख ॥
जनम साखी श्री गुरु नानक देव जी, (संपा: प्यारा सिंह) पृ. 21
—तब बाबे आखिआ: 'मरदानिआ; शब्द चिति करि, तउ बाझु बाणी सिर नहीं आवदी। तबि गुरु बाबे आखिआ, 'मरदानिआ रबाब वजाइ।'
(भाई वीर सिंह, श्री गुरु नानक चमत्कार पुरबारध. पृ. 306)
—मरदानिआ तू तार वजाइ।
शब्द भनिउ किछ हित मे आइ।
(जनम साखी श्री गुरु नानक शाह की, संत दास छिवर (संपा. डा. गुरदेव सिंह), पृ. 126

28. तब गुरु बाबा हरि दुआर के विखै बैठा था और बेसाखी का नावणु है, लोक बहुतु जुड़े हैं। तब गुर बाबे के साथि सेवक थे। तिनहु पुछिआ जि, 'बाबा जी सलामति बहुतु लोक आऐ है, बडा पुरबु है, किछु तउ लोक का भला है जि

ऐतने जीव गंया आवते है अरु नावते है।' तब उस परथाइ
गुरु बावे बाणी बोली धनासरी राग महि जि :
गुर सागर रतनी भरपूरे ॥ अंमृत संत चुगहि नहीं दूरे ॥
... ...
सूरति मूरति आदि अनूपु ॥ नानकु जाचै साचै सरूप ॥123॥
(जनम साखी श्री गुरु नानक देव जी, मिहर-
वान की सोढी, (संपा. क्रिपाल सिंह), पृ. 123

29. गोस्वामी, ए. एस. सिक्ख धर्म और संगीत, पृ. 76.

गुरमति संगीत प्रबंध की विलक्षणता

गुरमति संगीत प्रबंध की विलक्षणता

श्री गुरु नानक देव जी से पूर्व भिन्न-भिन्न संगीत परंपराओं के अध्ययन से यह बात भलि-भांति स्पष्ट हो जाती है कि गुरु नानक देव जी के समय तक भारतीय संगीत की एक विशाल और महान् परंपरा मौजूद थी। अलग-अलग धार्मिक साम्प्रदाय और संत भक्त कवियों द्वारा संगीत के प्रयोग से भक्ति संगीत की एक अलग परंपरा नज़र आने लग पड़ी है। श्री गुरु नानक देव जी ने जैसे भारतीय धर्म दर्शन के क्षेत्र में एक नवीन पथ को सृजन किया उसी तरह उन्होंने अपने धर्म के प्रचार और विकास के लिए नई-नई संचार विधियों का इस्तेमाल भी किया। इस संचार प्रबन्ध की केन्द्रीय और मूल विधी संगीत के उपर ही आधारित थी।

'शब्द कीर्तन' की इस परंपरा में भारतीय संगीत के विभिन्न तत्वों को मौलिक प्रयोग के धारणी बनाते हुए नवीन अर्थ दिये गये हैं। इस नवीनता कारण यह परंपरा अपनी समकालीन धार्मिक और संगीत की परंपराओं से सहिज ही अलग हो जाती है। विभिन्नता का मुख्य कारण गुरु साहिब और विशेष करके श्री गुरु नानक देव जी द्वारा वाणी/शब्द की प्रस्तुति का सुनिश्चित प्रबन्ध की सृजना है। गुरु द्वारा बताई गई 'शब्द कीर्तन' की श्री गुरु ग्रंथ साहिब के संगीत प्रबन्ध के ऊपर आधारित प्रस्तुति की सैद्धांतिक व्यवहारिक परंपरा को **'गुरमति संगीत'** कहा जाता है। गुरमति संगीत की केन्द्रीय इकाई **'शब्द'** है। गुरु साहिबान ने शब्द को लोगों तक संचारित करने के लिए संगीत को माध्यम के रूप में अपनाया। शब्द की प्रस्तुति के लिए जिस विधान की सृजना की गई उस समूचे प्रबन्ध को **'गुरमति संगीत प्रबन्ध'** कहा जाता है। इस संगीत प्रबन्ध के अन्तर्गत प्रयोग में आने वाले विभिन्न संगीतक तत्व राग, गायन शैलियां, रहाओ, अंक और संगीतक तत्व हैं जो गायन का मार्ग दर्शन करते हैं। गुरबाणी संगीत की विलक्षणता को जानने के लिए और गुरबाणी अंतरनिहित परमसति के बोध के लिये इसके संगीत प्रबन्ध की विभिन्न इकाइयों के साथ संपर्क कायम करना आवश्यक है।

राग :— शब्द की प्रस्तुति का एक महत्वपूर्ण और मुख्य तत्व राग है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग सिरलेख के रूप में विद्यमान है जो

प्रस्तुतकार के लिए शब्द को निर्धारित राग के अंतर्गत करने का निर्देश है। राग संबंधी कई तरह के फुरमान श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित हैं।

सभना रागां विचि सो भला भाई।
जितु वसिआ मनि आइ॥
रागु नादु सभु सचु है कीमति कही न जाइ॥
रागै नादै बाहरा इनी हुकमु न बूझिआ जाइ॥
नानक हुकमै बूझै तिना रासि होइ॥
सतिगुर ते सोझी पाइ॥
— राग नाद शब्द सोहणे॥
जा लागै सहजि धिआनु॥[2]
— धंनु सु राग सुरंगड़े
आलापत सभ तिख जाइ॥[3]
— ओयंकारि ऐक धुनि ऐकै ऐकै रागु अलापै॥
ऐका देसी ऐकु दिखावै रहिआ बिआपै॥
ऐका सुरति ऐका ही सेवा ऐको गुर ते जापै॥[4]
— रागि नादि मनु दूजै भाइ।
अतरि कपटु महा दुखु पाइ॥[5]

इन फुरमानों से राग के महत्व और नहीं प्रयोग विधि स्पष्ट प्राप्त होती है। इसमें राग की नादात्मक शक्ति को स्वीकार किया गया है और राग उसी को अच्छा और उतम बताया गया है जिस के गायन करने के साथ सभी इच्छाएं मिट जाएं और उस प्रभु परमात्मा की याद मन में बस जाए। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना का आधार भी रागात्मक है। यह राग केवल दिखावे या नाम मात्र ही नहीं बल्कि शब्द के भाव और संगीत शास्त्र अनुसार बहुत ठीक हैं। वाणी की प्रकृति और राग की प्रकृति में अटूट संबंध है। इस संबंध को कायम रखने के लिऐ गुरु साहिबान ने राग के कई स्वरूपों को प्रयोग में लिया है जैसे गउड़ी गुआरेरी, गउड़ी चेती, गउड़ी माझ आदि।

अंक :—श्री गुरु ग्रंथ साहिब में शब्दों को विभिन्न अंकों द्वारा विभाजित किया गया है। शब्द में रहाओ की तुक के बिना बाकी तुकों की समाप्ति पर १, २, ३, ४ आदि अंक मिलते हैं जो अंतरों के सूचक हैं, ता कि गुरमति संगीत विधान के अनुसार रहाओ की तुक का

बार-बार गायन हो सके। इन अंकों में एक तुक के इलावा दो या तीन तुकें भी पाई जाती हैं। इन अंकों से संबंधित काव्य-शैली और गायन शैली का भी ज्ञान होता है। उदाहरण के लिए चऊपदे में चार पदे, दुपदे में दो पदे और अष्टपदी में आठ पदे होते हैं। इन पदों की गिनती हमें अंकों से पता लगती है कि इस शब्द के कुल कितने बन्द हैं। यह अंक या अंतरे की तुकों का संबंध रहाऊ की तुक के साथ है जो रहाऊ की तुक में अंकित केन्द्रीय भाव को दृढ़ करवाने के लिए उपजित समस्या का समाधान के लिए प्रमाण दलीलों, उक्तियों और उदाहरणों के रुप हैं। वाणी प्रबन्ध के अनुसार अंतरों की तुकों के गायन को स्पष्ट रुप में समझने के लिए श्री गुरु नानक देव जी का शब्द जो उन्होंने सज्जन ठग के सम्बन्ध में उचारा था, का स्वरुप इस प्रकार है :

सूही महला १ घरु ६
१ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥
उजलु कैहा चिलकना घोटिम कालड़ो मसु ॥
धोतिआं जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु ॥ १ ॥
सजण सेई नालि मैं चलदिआं नालि चलंनि ॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि् ॥ १ ॥ रहाउ ॥
कांठे मंडप माड़ीआ पासहु चितवीआहा ॥
ढठीआ कंमि ना आवनी विचहु सखणीआहा ॥ २ ॥
बगा बगे कपड़े तीरथ मंझि वसंनि् ॥
घुटि घुटि जोआ खावणो बगे न कहीअनि् ॥ ३ ॥
सिंमल रुखु सरीरु मैं मैजन देखि भुलनि् ॥
से फल कंमि न आवनी ते गुण मैं तनि हंनि् ॥ ४ ॥
अंधुलै भारु उठाइया डूगर वाट बहुतु ॥
अखी लोड़ी ना लहा हउ चड़ि लंघा कितु ॥ ५ ॥
चाकरीआ चंगिआईआ अवर सिआणपा कितु ॥
नानक नामु समालि तूं बधा छुटहि जितु ॥ ६ ॥ १ ३ ॥[5]

उपरोक्त शब्द में रहाओ की तुक में अंकित भावों को अंतरों में उदाहरणों को देकर समझाया गया है। वाणी संगीत अनुसार शब्द का आरम्भ रहाओ की तुक से स्थाई के रुप में गायन करने की परंपरा है। इस शब्द की रहाओ की तुक इस प्रकार है :

सजण सेई नालि मै चलदिआं नालि चलंनि् ॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि् ॥ १ ॥ रहाओ ॥

इस रहाओ की तुक में सज्जन उसको कहा गया है जो समय पर काम आये, जो हर समय मेरे साथ चले, जो यहां संसार मे चलते समय भी मेरे साथ ही चले, आगे जहां कहीं भी करमों का हिसाब मांगा जाता है, वहां बिना झिझक होकर हिसाब दे सके, हिसाब देने में कामयाब हो सके, भाव बाहरी दिखावे वाले सज्जन नहीं हैं।

उजलु कैहा चिलकणा घोटिम कालड़ी मसु ॥
धोतिआं जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु ॥ १ ॥

सज्जन कौन हैं ? इसे उदाहरण देकर समझाया है कि कांसे का बर्तन बड़ा साफ और चमकीला होता है पर उसे रगड़ने से हाथ काला हो जाता है। यदि उसे सौ बार भी धो लिया जाये तो बाहर से धोने से उस की अन्दर की कालिस दूर नहीं होती।

कोठे मंडप माड़ीआ पासहु चितवीआहा।
ढठीआ कंमि ना आवनी विचहु सखणीआहा ॥ २ ॥

दूसरी उदाहरण महल और माड़ियां की है। यदि वह अन्दर से सखनीयां हैं, वह गिर जाती है और गिरे श्रगार करके बैठे रहे पर यदि उसने खत्म हो जाना है फिर हार श्रृंगार वाला शरीर काम नहीं आता।

बगा बगे कपड़े तीरथ मंझि वसंनि् ॥
घुटि घुटि जीआ खावणे बगे ना कहीअन् ॥ ३ ॥

तीसरी उदाहरण बगलों की दी है कि बगले के सफेद पंख होते हैं, रहते भी वह तीर्थों पर ही हैं पर जीवा को गल से घुट घुट कर खा जाने वाले अंदर से साफ सुथरे नहीं कहे जाते।

सिंमल रुखु सरीर मै मैजन देखि भुलंनि् ॥
से फल कमि न आवनी ते गुण मै तनि हुनि् ॥ ४ ॥

जिस तरह सिमल का वृक्ष है वैसा ही मेरा शरीर है। सिंमल के फलों को देखकर तोते को भुलेखा हो जाता है। सिंमल के फल तोते के काम नहीं आते। ऐसे गुण मेरे शरीर में हैं।

अंधुलै भार उठाइआ डूगर वाट बहुतु ॥
अखी लोड़ी ना लहा हउ चड़ि लंघा कितु ॥ ५ ॥

मैं अन्धे ने सिर पर विकारों का भार उठाया हुआ है। आगे मेरा (जीवन पंथ) बड़ा पहाड़ी रास्ता है। आखों के साथ ढूंढने से भी राह खहिड़ा ढूंढ नहीं सकता क्योंकि आंखें नहीं हैं। इस हालात में किस तरीके के साथ पहाड़ी पर चढ़ कर मैं पार चला जाऊं ?

चाकरीआं चंगिआइआं अवर सिआणप कितु ॥
नानक नामु समालि तूं बधा छुटहि जितु ॥ ६ ॥

दुनियाँ के लोगों की खुशामदें, लोग दिखावे, चलाकियां किसी काम नहीं आ सकती। परमात्मा का नाम अपने हृदय में संभाल कर रख। माया के मोह में बंधा हुआ तू इस नाम सिमरण के द्वारा ही मौत के बंधनों से मुक्ति पा सकेगा।

इस शब्द के अन्तर्गत रहाओ (स्थाई) अंकों (अंतरों) की कार्य प्रक्रिया इस प्रकार है :

रहाओ ॥ १ ॥	रहाओ ॥ १ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंतरा ॥ १ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंतरा ॥ २ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंतरा ॥ ३ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंतरा ॥ ४ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंतरा ॥ ५ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंतरा ॥ ६ ॥	रहाओ ॥ १ ॥

शब्द में प्रत्येक अंतरे के बाद रहाओ की तुक के आने की प्रक्रिया सरोते के मन में शब्द के अन्तरनिहित भावों का बोध करवाने के लिए रोशनी प्रदान करती है।

रहाओ : गुरबाणी में काव्य और संगीत के पक्ष से रहाओ एक महत्वपूर्ण इकाई है। रहाओ की तुक में शब्द का केन्द्रीय भाव मौजूद होता है। बाणी की विचार के संदर्भ में जहां रहाओ की तुक अहिम भूमिका निभाती है वहां संगीतक संचार के लिए रहाओ केन्द्रीय धुरा है। मध्यकाल में भारतीय संगीत में प्रचलित प्रबन्ध और धुपद गायन शैली का एक धातु 'ध्रुव' है जिसे अचल या 'चिरस्थाई' कहा गया है। ध्रुव का ही दूसरा रुप रहाओ है जो विचार, गायन के संदर्भ में हमेशा

कार्यशील रहता है। रहाओ को टेक शब्द के साथ भी प्रतिभापित किया जाता है। मध्यकालीन संत भक्त कवियों ने भी अपनी रचनाओं के लिए रहाओ के लिए ध्रुव[8] टेक[9] शब्द का प्रयोग किया है। अठारवीं शताब्दी के कवि दादू, कानू, शाह हुसैन, शाह शरफ की रचनाओं में भी रहाओ शब्द मिलता है। इनकी रचनाओं में आम तौर पर शब्द का पहला बंद रहाओ की तुक का है पर गुरबाणी में ज्यादातर शब्द के पहले बंद के बाद रहाओ की तुक आती है। कई शब्दों में रहाओ दो[9] रहाओ तीन[10] और रहाओ चार[11] भी दृष्टिगोचर होते हैं, उनके लिए रहाओं २, रहाओ ३, रहाओ ४, इस तरह अंक विद्यमान हैं। गुरमति संगीत प्रबन्ध के अनुसार शब्द का गायन रहाओ की तुक को स्थाई मानकर हर अंतरे के बाद बार-बार करने की परंपरा है क्योंकि रहाओ की तुक में शब्द का केन्द्रीय भाव मौजूद है और अंतरों में इसको विभिन्न दलीलों, प्रमाणों सहित दृढ़ किया गया है। जब समस्या का समाधान हो जाता है तो वहां रहाओ की तुक बदल जाती है। इस लिये रहाओ दूसरे की तुक को स्थाई तौर पर गायन करना है। बाणी प्रबन्ध के अनुसार श्री गुरु अर्जुन देव जी द्वारा रचित शब्द इस प्रकार हैं :

१ ओंकार सतिगुर प्रसादि ॥
महला ५ रागु गउड़ी गुआरेरी चऊपदे ।
किन विधि कुसलु होत मेरे भाई ॥
किउ पाईऐ हरि राम सहाई ॥ १ ॥ रहाओ ॥
कुसलु न गिरहि मेरी सभ माइया ॥
ऊचे मंदर सुंदर छाइया ॥
झूठे लालचि जनमु गवाइआ ॥
हसती घोड़े देखि विगासा ॥
लसकर जोड़े नेव खवासा ॥
गलि जेवड़ी हउमै के फासा ॥ २ ॥
राज कमावै दह दिस सारी ॥
माणै रंग भोग बहु नारी ॥
जिउ नरपति सुपनै भेखारी ॥ ३ ॥
ऐकु कुसलु मों कउ सतिगुरु बताया ॥

हरि जो किछु करे सु हरि किआ भगता भाइआ ॥
जन नानक हउमै मारि समाइआ ॥ ४ ।
इनि बिधि कुसल होत मेरे भाई ॥
इउ पाईऐ हरि राम सहाई ॥ रहाओ दूजा ॥[12]

उपरोक्त शब्द को श्री गुरू अर्जुन देव जी ने राग गउड़ी गुयारेरी में उच्चारण किया है। गउड़ी गुयारेरी की प्रकृति गंभीर होने के कारण यह अति गंभीर किस्म के विचारों वाले शब्दों के लिए अधिक उपयुक्त है। गउड़ी गुयारेरी राग अधीन इस शब्द का साधारण पाठ कर तो इस तथ्य का बोध होता है कि :

किन बिधि कुसलु होत मेरे भाई ॥
किऊ पाईये हरि राम सहाई ॥ १ ॥ रहाओ ॥

शब्द में यह पहली रहाओ की तुक है जिसमें गुरू साहिब हमारे सामने यह समस्या रख रहे हैं कि मनुष्य के अंतर आत्मिक आनन्द किन तरीकों से पैदा हो सकता है ? वह हरि परमात्मा किस तरह मिल सकता है ?

इस रहाओ वाली तुक में दर्ज समस्या को सुलझाने के लिए अंतरों की तुकों में दलीलें होती हैं।

अंतरे की पहली तुक में गुरू साहिब कहते हैं कि माया की ममता के कारण घर में सुख नहीं है। बड़े बड़े सुन्दर महल होने पर भी आत्मिक आनन्द मिलने की बजाय झूठ लालच में मनुष्य का कीमती जीवन व्यर्थ चला जाता है ॥ १ ॥

दूसरी उदाहरण में कहते हैं कि एक मनुष्य हाथी, घोड़े देखकर खुश होता है। लश्कर, नाइब, मंत्री, शाही नौकरी भी हो तो भी यह हऊमै का फंदा बनकर ही गले पड़ती है ॥ २ ॥

दसों दिशाओं में भाव सारी सृष्टि पर राज्य करे ? यह इस तरह होता है जैसे राजा स्वप्न में मांगने वाला बन जाये भाव यह सब जल्दी ही खत्म हो जाता है और फिर अंत में मनुष्य ऐसे दुख को प्रकट करता है कि जैसे राजा अपने आपको स्वप्न में भिखारी देखकर करता है ॥ ३ ॥

शब्द के अंतिम अंतरे की तुक में गुरु साहिब उपजित समस्या का हल बतलाते हैं कि हऊमै का त्याग करके उस प्रभु की रज़ा में रहकर प्रभु के गुण गायन करने से ही आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है और हरि परमात्मा के साथ मिलाप होता है ॥ ४ ॥

इस शब्द के अन्तर्गत रहाओ (स्थाई) अंकु (अंतरे) की कार्य प्रक्रिया इस प्रकार है।

रहाओ ॥ १ ॥	रहाओ ॥ १ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंकु ॥ १ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंकु ॥ २ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ।	अंकु ॥ ३ ॥	रहाओ ॥ १ ॥
रहाओ ॥ १ ॥	अंकु ॥ ४ ॥	रहाओ ॥ २ ॥
रहाओ ॥ २ ॥	रहाओ ॥ २ ॥	रहाओ ॥ २ ॥

शब्द की निर्धारित वाणी प्रबन्ध अनुसार रहाओ की तुक का बार-बार गायन जहां शब्द के अन्तरनिहित भावों को प्रकाशमान करने में सहायक होती है वहां भावों में दृढ़ता प्रदान करने में तीव्रता का बाधा करती है। भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार, 'गायक की मर्जी है कि रहाओ की तुकों में जिस मर्जी तुक को स्थाई माने'[10] परन्तु वाणी के अर्थों को ध्यान में रखते हुये देखा जाये तो यह विचार ठीक नहीं बैठता क्योंकि जहां रहाओ की तुक बदली जाती है वहां समस्या भी बदल जाती है। सो शब्द के प्रयोग की सिद्दी के लिये निश्चित संकेतों के अनुसार वाणी का गायन अनिवार्य है।

घरु :—गुरबाणी में राग के बाद अगला संगीतक संकेत घरु १, घरु २ आदि इस तरह सिरलेख रूप में अंकित है। घरु की कुल गिनती 17 है। घरु के सम्बन्ध में विद्वानों के अलग-अलग मत है। भाई वीर सिंह जी के अनुसार, 'साजों में तीन ग्राम होते हैं, ग्राम घरु से बनता है, सो तीन ग्राम की स्वरों के टिकने से घरु हैं। घरु १ से भाव गाये जाने वाले राग की प्रधान स्वर की संख्या का संकेत है।'[11] भाई काहन सिंह नाभा घरु संबंधी लिखते हैं, 'गुरमति संगीत के अनुसार घरु के दो अर्थ है-एक ताल, दूसरा स्वर और मुर्छना के भेद करके एक ही राग के

सरगम प्रस्तार अनुसार गायन के प्रकार।"[13] बहुमत विद्वानों ने घरु को ताल के रूप में स्वीकार किया है। घरु पद के आगे जो अंक हो उसके अनुसार समझ लेना चाहिए कि शब्द उस ताल में गायन करना है क्यों कि सुर, ताल, लय, अंग, न्यास, गृह ऐसी बातें राग का स्वरूप प्रकाश करती है, इस लिये जितने-जितने ताल में जो-जो राग का शब्द व बाणी उचारी सो-सो गायन के ताल का पता लिखा है।[14] कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि इरानी ताल पद्धति में ताल रूपों को एक गाह, दो गाह, सिह गाह, चार गाह आदि कहा जाता है।[15] सो हो सकता है कि गुरू साहिबान ने गाह जिसका अर्थ घर है, को ताल के रूप में प्रयोग किया हो। फ़ारसी बहिर की बुनियाद पर यह मत भी प्रचार में है कि अमीर खुसरो ने 17 तालों का आविष्कार किया जिनके नाम पशतों, जोबहार, कव्वाली, सूलफाखता, जत, जलद, तिताला, सवारी, आड़ा, चौताल, झुमरा, ज़मानी स्वारी, दासतान, खसम, फरोदस्त, कंद, पहलवान, पट और चपक हैं।[16] यह 17 ताल मध्य-काल में भारतीय संगीत में प्रचार में हैं। संभव है कि गुरू साहिबान के प्रयोग किये गए 17 घरु यह भारतीय संगीत में प्रचलित यह 17 घरु ही हों। कुछ भी हो बहुमत विद्वान घरु को ताल के रूप में स्वीकारते हैं। समय के अतराल के कारण व्यवहारिक तौर पर घरु का प्रयोग समाप्त हो गया है।

जति :—जति जो भारतीय संगीत में यति के नाम से ही प्रचलित है। यति से भाव है निरंतर चाल में ठहराव की अवस्थाएँ। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में जति का राग बिलावल के अंतर्गत एक सिरलेख अंकित है—'बिलावल महला १ थिति घरु १० जति'।[17] भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार 'संगीत की धारणा का नाम जति (यति) है और मृदंग के बोल का जहां विश्राम हो वह भी जति की संज्ञा है।"[18] डा० चरण सिंह जी ने 'श्री गुरू ग्रंथ बाणी ब्यौरे' में लिखा है, 'जति, गति, सपथ यह तीनों जोड़ी के करतब हैं, जिस समय दायां हाथ सति का काम करे अर्थात् गत बाकर उंगलियों में जोड़ी के किनारे और मध्य में काम करें और जब दोनों हाथों की उंगलियां हरफ निकालें और दायां हाथ बाकर खुलासा बजाये तो उसे जति कहते हैं। जब दोनों हाथ खुले काम करें और आवाज भी खुली निकले (जिसे कड़ कुट कहते हैं) तो

उसकी सजा साथ होती है।'[21] जति का संबंध जोड़ी बजाने की एक गत के साथ है।[22] उपरोक्त विचारों से पता चलता है कि मध्यकाल में जोड़ी के बंद बोलों का प्रचलन हो चुका था परंतु इन हवालों से कोई भी स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। वर्तमान संगीताचार्य जति को इस तरह प्रभावित करते हैं कि 'जब जोड़ी पर दायां हाथ खुला बोल बजाये और बायां हाथ बंद बोल बजाये तो ऐसी ताल प्रक्रिया को जति का नाम दिया जाता है।' सो गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज सिरलेख से भाव है कि राग विलावल के अन्तर्गत थिती के विशिष्ट विश्रामों को ध्यान में रखते हुए दसवें घर की लय में इस शब्द का गायन करना है।

गायन शैलियां :—गुरबाणी संगीत प्रबंध के अंतर्गत गुरू साहिबान ने ध्रुपद, प्रबन्ध और पड़ताल जैसी शास्त्रीय गायन शैलियों का प्रयोग किया वहां अलाहुणीयां, घोड़ियां, वार, सोलहे, छंतु, मुंदावणी आदि देशी या लोक रूपों को भी प्रयोग में लिया। श्री गुरू ग्रंथ साहिब के अध्ययन से स्पष्ट है कि वाणी के लिए प्रयुक्त गायन शैलियों को संगीत विधान के अनुशासन के अंतर्गत वाणी के उद्देश्य को मुख्य रख कर प्रयोग में लाया गया है। भाव मार्गी या शास्त्रीय शैलियों की कट्टरता को गुरमति संगीत विधान के सहिज और देशी या लोक शैलियां की आप मुहारी खुल को गुरमति संगीत प्रबन्ध के अंतर्गत अनुशासन प्रदान है। गुरबाणी में मार्गी शैलीयों का रागात्मक निर्धारण व्यवहारिक रूप में गुरमति संगीत प्रबन्ध की विलक्षणता की पहचान है।

गुरमति संगीत प्रबन्ध के संगीतक संकेतों के इलावा शब्द की प्रस्तुति संगीत की किसी साधारण प्रस्तुति से भिन्न है। साधारण कलाकार अपने अंदर मेहनत के साथ कमाई हुई कला की बाहरमुखी प्रस्तुति करता है पर गुरबाणी की शब्द गायन प्रस्तुति के अंतर्गत प्रस्तुतकार उस परमसति का अनुभव और बोध करता हुआ सहज आनंद की प्राप्ति करता है। सहिज आनंद की अवस्था प्राप्त करने के लिये गायक के लिये गुरू साहिबान जहां विशिष्ट संगीत प्रबन्ध की सृजना करते हैं वहां प्रस्तुति की विधि के लक्षणों का भी वर्णन करते

है जो गुरबाणी के इन फुरमानों से स्पष्ट है :

—इकि गावत रहे मनि सादु न पाई ॥
हउमै विचि गावहि विरथा जाई ॥[23]
आपि गवाये सु हरिगुन गाओ ॥[24]
—गुरमति वाजै सबदु अनाहदु
गुरमति मनूआ गावै ॥[25]
—सहजे गाविआ थाई पवै ॥
बिनु सहजै कथनी बादि ॥[26]

उपरोक्त फुरमानों से स्पष्ट है कि शब्द की प्रस्तुति के लिये हऊमै का त्याग, आपा सम्रपण, गुरमति के अनुसार होना, सहिज में रहना जैसे नियमों को पूर्ण रूप में धारण करना है क्यों जो वाणी का आदेश है। इस तरह गुरमति संगीत की गायन प्रस्तुति में कला का आडम्बर, आर्कषण और प्रलोभन का त्याग बुनियादी तौर से महत्वपूर्ण है। गुरमति संगीत की किसी भी शब्द कीर्तन प्रस्तुति में जब-जब शब्द की अतिरिक्त राग/गायन का कलात्मक पक्ष प्रधान भावी होगा तभी ही गुरमति संगीत की यह प्रस्तुति अपने लक्ष्य से अलग हो जायेगी।

उक्त वर्णित विलक्षणताओं को प्रबन्ध रूप में स्वीकार करते हुए गुरू साहिबान ने अलग-अलग कीर्तन चौकीयां[27], कीर्तन केन्द्र[28], अलग-अलग साज[29] और प्रमुख कीर्तनीयो[30] के गायन द्वारा मौलिक और विलक्षण दृष्टि से प्रयोग किया और इस परम्परा को व्यवहारिक रूप में सदीवी विलक्षणता प्रदान की। यही गुरमति संगीत प्रबन्ध जब इन प्रस्तुति सहायकों की क्रियात्मकता द्वारा सजीव/व्यवहारिक रूप प्रदान करता है तो इसे सहिजे ही पूर्वकालीन और समकालीन परम्पराओं के साथ अलग किया जा सकता है।

यह विशिष्ट संगीत प्रबन्ध वाणी के प्रभाव को उजागर करने के लिये या वाणी को प्रकाशमान करने में सहायक होता है। इस विशिष्ट संगीत प्रबन्ध संबंधी विज्ञानिक पहुँच, गुरमति संगीत के संस्थागत प्रचलन और वाणी की संपादना के अंतर्गत विभिन्न, संगीतक संकेत, फुरमान विशिष्ट संगीत प्रबंध को मूर्तिमान करने में सहायक होता है और इसकी पहचान योग्य स्थापति और समकालीन पूर्वकालीन परम्पराओं से विलक्षणता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

गुरमति संगीत की पूर्वकालीन समकालीन धार्मिक और संगीत परम्पराओं के संदर्भ में इस परम्परा का पहचान योग्य स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। श्री गुरू नानक देव जी ने उक्त वर्णित समूह परम्पराओं के अध्ययन और चिंतन के उपरान्त सिक्ख धर्म की स्थापना के साथ-साथ गुरमति संगीत की सृजना भी की, जो अलग-अलग गुरू साहिबानों के यत्नों, क्रियात्मक प्रयोग के सैद्धांतिक विशिष्टता के आधार पर मूर्तिमान हुई है। गुरमति संगीत का मध्यकालीन भारतीय संगीत में अलग स्थान है। भारतीय संगीत के इतिहास के प्रसंग में विचारें तो बाबर से औरंगजेब तक के समय में अकबर काल को भारतीय शास्त्रीय संगीत का सुनहरा युग स्वीकार किया जाता है। श्री गुरू नानक देव जी बाबर के समकालीन थे। उन्होंने पूर्वकालीन और समकालीन संगीत परम्पराओं के मंथन से अपने मत के प्रचार के लिए जिस संगीत परम्परा का आरम्भ किया वह 'गुरमति संगीत' है जिसके स्वरूप और सिद्धांतों के सम्बन्धी हम ऊपर विचार कर आये है। यह परम्परा लगभग भारतीय शास्त्रीय संगीत के सुनहरे युग के सामान्तर सुदृढ़ और स्थापित रूप में उजागर हो जाती है। श्री गुरू अर्जुन देव जी अकबर के समकालीन थे और गुरमति संगीत के विकास के संदर्भ में गुरू अर्जुन देव जी का समय भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। क्यों जो इस महान गुरू ने श्री गुरू ग्रंथ साहिब की संपादना कर मध्यकालीन अध्यात्मिक सोच के मंथन में अंमृत (श्री गुरू ग्रंथ साहिब) की सृजना की। श्री गुरू ग्रंथ साहिब ही गुरमति संगीत के आधार ग्रंथ हैं। श्री गुरू अर्जुन देव जी के पशचात यह परम्परा निरंतर विकासशील रही। श्री गुरू गोबिंद सिंह जी के पशचात श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी को गुरू के रूप में मान्यता के उपरांत यह परम्परा आज भी विद्यमान है।

उक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि यह परम्परा केवल सिक्ख धर्म के क्रियात्मक संगीत/कीर्तन की चलंत जैसी प्रणाली नहीं बल्कि इसके विशिष्ट सिद्धांत, स्वरूप, प्रकृति है। दस गुरू साहिबानों के उपरांत श्री गुरू ग्रंथ साहिब की गुरिआई (गुरू गद्दी) बखश देना महिज इत्तफाक नहीं बल्कि शब्द गुरू के केन्द्रीय गुरमति सिद्धांत को स्पष्ट रूप में मान्यता देना है। इस शब्द गुरू का संचार संगीत द्वारा ही संभव है। ऐसा श्री गुरू ग्रंथ साहिब की संपादना सेस्पष्ट हो रहा है।

इस लिए सिक्ख धर्म में संगीत, गुरमति संगीत के विशिष्ट रूप में श्री गुरु नानक देव जी से लेकर वर्तमान में भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अंग-संग विद्यमान हैं। इस वाणी के प्रकाश और बोध के लिये संगीत मुख्य संचार जुगत के रूप में भी प्रयोग हो रहा है। गुरमति संगीत की सिद्धांत परम्परा के दर्शन श्री गुरु ग्रंथ साहिब की रागात्मक संपादना और वाणी के मध्य भिन्न-भिन्न फुरमानों, हवालों और संकेतों से किये जा सकते हैं। इसके साथ ही श्री गुरु नानक देव जी से लेकर अब यह परम्परा क्रियात्यक रूप में सिक्ख धर्म के पैरोकारों के नित्य-प्रति अध्यात्मिक कर्म की अभिन्न अंग है। इस क्रियात्मकता ने भारतीय संगीत में विलक्षण और पहचान योग्य स्थान बनाया है। इस परम्परा ने अपनी पूर्वकालीन और समकालीन धार्मिक और संगीत परम्पराओं में से अनेक तत्वों और उपकरणों को गुरमति अनुशासन का धारणा बना कर गुरमति संगीत नाम विशिष्ट परम्परा के रूप में स्थापित रूप ग्रहण किया है।

1. श्लोक महला ४, **आदि ग्रंथ**, पृ. 1423
2. महला ३, ·····वही····· , पृ. 849
3. वार रामकली महला ५, ·····वही·····पृ. 958
4. रामकली महला ५, ·····वही····· पृ. 885
5. प्रभाती महला १, ·····वही·····, पृ. 1342
6. सूही महला १, ·····वही·····, पृ. 729
7. स्त्रिकतकमला कुचमंडल ध्रितकुंडल
   कलितललितवनमाल
   जय जय देव हरे ॥ ध्रुव ॥ १ ॥
8. चरखा मेरा अजब रंगीला वो
   सोहंद रसना धुन रस मीत ॥ टेक ॥
   (**चोणवीआं काफीआं**, (संपा: सुरिन्द्र सिंह कोहली), पृ. 134
9. महला १, **आदि ग्रंथ**, पृ. 25-26
10. ·····वही·····, पृ. 54
11. महला ५, ·····वही·····, पृ. 96-97
12. **आदि ग्रंथ**, पृ. 175-76
13. **महान कोश**, पृ. 1014

14. **गुरू ग्रंथ कोश**, पृ. 302
15. **महान कोश**, पृ. 441
16. भाई वीर सिंह, संथया : **श्री गुरू ग्रंथ साहिब** (पोथी पहली), पृ. 182
17. **शब्दार्थ श्री गुरू ग्रंथ साहिब**, (पोथी पहली), पृ. 74
18. **निबंध संगीत**, पृ. 557–58
19. **आदि ग्रंथ**, पृ. 838
20. **महान कोश**, पृ. 502
21. ……वही……, पृ. 502
22. साहिब सिंह (प्रो.), **श्री गुरू ग्रंथ साहिब दर्पण** (पोथी छठी) पृ. 229
23. गउड़ी गुयारेरी महला ३, **आदि ग्रंथ**, पृ. 158
24. गउड़ी सुखमनी महला ५, अष्टपदी ६, ……वही……, पृ. 270
25. गउड़ी पूरबी महला ५, ……वही……, पृ. 172
26. सिरी राग मः ३, ……वही……, पृ. 68
27. आसा की वार की चौकी, बिलावल की चौंकी, सो दरु की चौंकी, कल्याण की चौकी
28. करतारपुर साहिब, खडूर साहिब, गोइंदवाल साहिब, श्री हरिमंदर साहिब अमृतसर, अनंदपुर साहिब, दमदमा साहिब
29. रबाब, सारंदा, सारंगी, ताऊस, ढड आदि
30. भाई मर्दाना, भाई सत्ता, भाई बलवंड, भाई सादू, भाई बादू, भाई रजादा, भाई सजादा आदि

गुरमति संगीत का राग प्रबंध

गुरमति संगीत का राग प्रबन्ध

गुरमति संगीत में जहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब की समूह बाणी का गायन आधार राग है वहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सम्पादना भी रागों पर आधारित की गई है। इस संबंध में बाणी में अंकित अनेक फुरमान राग के महत्व और गुरमति संगीत में इसके संदर्भ को भली भांति उजागर करते हैं :

—धंनु सु राग सुरंगड़े आलापत सभ तिख जाए।[1]
—सभना रागा विचि सो भला भाई जितु वसिआ मनि आए॥
—रागु नादु सभु सचु है कीमति कही ना जाए।[2]
—गुण गोविन्द गावहु सभि हरि जन, राग रतन रसना आलाप।[3]

यदि बाणी के सम्पूर्ण स्वरूप का साधारण दृष्टि से ही पाठ करें तो हमारे सामने यह तत्व भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि सनातनी लोग और विभिन्न कवि रूपों के आधार पर निर्मित बाणी को बाणी के गायन हित विभिन्न राग निर्धारित किये गये हैं। कई बार मन में एक शंका भी उत्पन्न होती है कि सनातनी कवि रूप या शास्त्रीय गायन शैली में राग का निर्धारण तो मानने योग्य है परंतु लोक शैली में किसे राग के अन्तर्गत अंकित करे या इनका राग निर्धारित करना कहां तक उचित है। यह शंका साधारण ज्ञान और दृष्टि की उपज हैं। गुरबाणी के इन गोरख रहस्य को समझने के लिए इसकी संगीतात्मक और रागात्मक पृष्ठभूमि को जानने के लिये यह भी जरूरी है कि राग प्रबन्ध पर विचार किया जाये और राग प्रबंध पर विचार करने से पूर्व राग की भारतीय संगीत में प्रयोग शक्ति और समर्था सम्बन्धी जानना अति आवश्यक प्रतीत होता है।

राग भारतीय संगीत की केन्द्रीय और प्रमुख इकाई है। राग से पूर्व जाति गायन प्रचार में रहा। उपरांत राग का प्रथम स्रोत 7वीं शताब्दी के संगीत ग्रंथकार मतंग मुनि के ग्रंथ 'बृहददेशी' में प्राप्त होता है। वहां से लेकर अब तक राग भारतीय संगीत की केन्द्रीय और प्रमुख इकाई है। गायन जो कि भारतीय संगीत की मूल आधारशिला है की शास्त्रिक

पहचान और सौन्दर्यात्मक रूप रेखा राग पर ही आधारित है। इस तरह वादन में भी राग इकाई के रूप में विद्यमान है। भारतीय संगीत की कोई भी ऐसी गायन या वादन शैली नहीं जिसमें राग की झलक न हो। राग को भारतीय संगीत का सुरात्मक छंद या मीटर भी कहा जाता है। विभिन्न रंजक स्वरों को संगीत शास्त्र के अनुसार क्रम प्रधान होने के कारण ही राग की उत्पत्ति होती है। राग के बिना भारतीय संगीत की कल्पना अधूरी है। इसलिये किसी भी संगीत प्रबन्ध या अर्ध संगीत प्रबन्ध पर चर्चा करते समय इसके राग पक्ष सम्बन्धी चर्चा करना बुनियादी तौर पर आवश्यक है।

संगीत और कवि में राग के अर्थ अलग-अलग हैं। कवि के पक्ष में राग को प्रति और अनुराग के अर्थ दिये गये हैं और दर्शन पक्ष में राग विराग।[4] भारतीय संगीत के प्राचीन ग्रंथ 'नाट्य शास्त्र' में इसका उल्लेख साहित्यिक स्तर पर किया गया है।[5]

भारतीय संगीत के इतिहास को अध्ययन करने से पता चलता है कि राग गायन से पूर्व जाति गायन प्रचार में था। लगभग 7वीं शताब्दी में राग गायन अस्तित्व में आया। संगीत के अनुसार सबसे पहले राग शब्द का प्रयोग मतंग मुनि ने अपने ग्रंथ "बृहददेशी" में किया।

सवरवरण विशेषण ध्वनिभेदेन वा पुनः
रंजयते येनयः कशिचत स रागः संम्मतः सतम ॥[6]

अर्थात् वह धुन जो वर्णों के साथ सजाई हो और जिसमें रंजकता हो, राग कहलाती है।

ग्रंथकार पंडित शारंगदेव ने अपने ग्रंथ 'संगीत रत्नाकर' में राग संबंधी लिखा है 'स्वर और वर्ण के साथ सजी विशिष्ट धुनी जो रंजकता प्रदान करती है,' उसे राग कहते हैं।

—यो सो ध्वनिविशेषसतु स्वर—वरणु—विभूषितः
रंजको जनचितानां स रागः कथितो बुधे ॥[7]

पंडित अहोबल के अनुसार भी रंजक स्वरों का समूह राग कहलाता है।

रजक : स्वर संदर्भो राग इतिभीधीयते ।[8]

भारतीय संगीत में कुछ राग रागनियां की उत्पत्ति देवी-देवताओं से

मानी जाती है। शिव ने पांच रागों की उत्पत्ति की और छठा राग पार्वती द्वारा उत्पन्न हुआ। फिर ब्रह्मा ने तीन रागनियां बनाई। शिव जी के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण और आकाश की ओर मुख से भैरव, हिंडोल, मेघ, दीपक और श्री राग निकाले और पार्वती के मुख से कौशिक राग निकाला।* भारतीय संगीत में रागों की उत्पत्ति देवी देवताओं से मानी जाती हैं। पर ऐसे विचार केवल कल्पना के आधार पर प्रगट किए गए हैं जिन के बारे कोई आधार नहीं है।

राग के लक्षण :— राग जाति का ही विकसित रूप है। यह जाति के मूल तत्वों पर स्थित है। इनमें समानता होने के कारण जाति के नियम भी राग पर लागू किये जा सकते हैं जो कि बाद में राग के लक्षण नामक प्रचार में आये। रंजकता प्रधान रचना जो जन-चित-रंजन करती है, राग कहलाती है। इस पर धुन या मेलाडी और राग एक रूप नजर आते हैं परंतु विशेष नियमानुसार स्वर और वर्ण के साथ सम्बन्धित विशेष प्रकार की धुनी, जो जन-चित-रंजन करने के समर्थ हो, राग कहते हैं। इस कारण राग और मेलाडी अपना अपना स्वतन्त्र पहचान योग्य स्थान ग्रहण करते हैं। राग में मानव मन पर रंग देने की शक्ति जिन तत्वों पर निर्भर करती है, उसके अन्तर्गत स्वरों की पुनरावृत्ति, कण, खटका और काकू भेद जैसी विभिन्न गायन क्रियाएं आ जाती है, इनके बिना राग के प्रमुख लक्षण जिनके आधार पर राग विशिष्ट पहचान योग्य स्थान ग्रहण करता है :- 1. थाट 2. स्वर 3. आरोह-अवरोह 4. जाति 5. वादी-संवादी-अनुवादी-विवादी 6. मुख्य अंग 7. न्यास 8. पूर्वांग-उत्तरांग 9. समय 10. सम्प्रकृतिक राग आदि।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में प्रयुक्त राग :— गुरमति संगीत का स्रोत श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी हैं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में राग दो विधियों से दृष्टिगोचर होते है - एक ततकरे के अन्तर्गत और दूसरा साधारण पाठ द्वारा।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के ततकरे के अनुसार 31 राग मिलते हैं जो मुख्य रागों के रूप में अंकित हैं और श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के साधारण पाठ द्वारा ततकरे के अनुसार 31 मुख्य रागो के अतिरिक्त

और राग भी प्राप्त होते हैं जो मुख्य रागों के अंतर्गत दर्ज हैं। इसके पहले कि इन के क्रियात्मक स्वरूपों से सम्बन्धित विचार करें, गुरबाणी के मुख्य रागों और उनके अन्तर्गत आये दूसरे रागों संबंधी जान लेना अति आवश्यक है।

राग का नाम	राग प्रकार	पृष्ठ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में
1. सिरी	—	14
2. माझ	—	94
3. गउड़ी	—	151
	अ. गउड़ी गुआरेरी	151
	आ. गउड़ी दक्षणी	152
	इ. गउड़ी चेती	154
	स. गउड़ी वैरागणि	156
	ह. गउड़ी पूर्वी दीपकी	157
	क. गउड़ी पूर्वी	242
	ख. गउड़ी दीपकी	12
	ग. गउड़ी माझ	172
	घ. गउड़ी मालवा	214
	ङ. गउड़ी माला	214
4. आसा	—	347
	क. आसा काफी	365
	ख. आसावरी	409
5. गुजरी	—	489
6. देवगंधारी	—	527
	क. देवगधार	531
7. बिहागड़ा	—	537
8. वडहंस	—	557
	क. वडहंस दक्षणी	580
9. सोरठि	—	595
10. धनासरी	—	13/660

11.	जैतसरी	—	696
12.	टोडी	—	711
13.	बैराड़ी	—	719
14.	तिलंग	—	721
	क.	तिलंग काफी	726
15.	सूही	—	728
	क.	सूही काफी	751
16.	बिलावल	—	794
	क.	बिलावल दक्षणी	843
17	गौड़	—	859
	क.	बिलावल गौड़	874
18.	रामकली	—	876
	क.	रामकली दक्षणी	907
19.	नट नारायण	—	975
	क.	नट	975
20	मालीगौड़ा	—	984
21.	मारू	—	989
	क.	मारू काफी	1014
	ख.	मारू दक्षणी	1033
22.	तुखारी	—	1107
23.	केदारा	—	1118
24.	भैरउ	—	1125
25.	बसंत	—	1168
	क.	बसंत हिडोंल	1171
26.	सारंग	—	1197
27.	मल्हार	—	1254
28.	कानड़ा	—	1294
29.	कल्याण	—	1319
	क.	कल्याण भोपाली	1321
30.	प्रभाती	—	1327
	क.	प्रभाती विभास	1327

	ख.	प्रभाती दक्षणी	1343
	ग.	विभास प्रभाती	1347
31.	जैजावंती	—	1352

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मुख्य रागों और उपरागों के अंतर्गत मौसमों और विभिन्न परम्पराओं के साथ सम्बन्धित राग भी मिलते हैं जिनका उल्लेख हम इस प्रकार कर सकते हैं।

शुद्ध राग :-जो राग स्वतन्त्र तौर पर भिन्न होते हैं, जिनमें किसी और राग की छाया दृष्टिगोचर नहीं होती, शुद्ध राग हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ततकरे के अंतर्गत दर्ज 31 प्रमुख राग शुद्ध राग हैं जैसे सिरी, माझ, गउड़ी, गूजरी, आसा आदि।

छायालग राग:-जिन रागों की रचना दो रागों की स्वरावलियों के मिश्रण से होती है, छायालग राग है। उदाहरण के रूप में गुरबाणी में गउड़ी चेती, गऊड़ी पूर्वी, गउड़ी दीपकी छायालग राग हैं।

संकीर्ण राग:-जिन रागों की उत्पत्ति दो या दो से अधिक रागों के मेल से होती है, वह संकीर्ण राग कहलाते हैं। गुरबाणी में राग गउड़ी पूर्वी दीपकी संकीर्ण राग हैं।

दक्षणी राग :-शुद्ध, छायालग, संकीर्ण रागों के अतिरिक्त गुरबाणी में कुछ राग ऐसे भी मिलते हैं जिनके साथ दक्षणी शब्द का प्रयोग किया गया है। यह राग मुख्य रागों के अधीन अंकित हैं जैसे गऊड़ी दक्षणी[10] बडहंस दक्षणी[11], बिलावल दक्षणी[12], माझ दक्षणी[13], रामकली दक्षणी[14], प्रभाती दक्षणी[15]।

मध्यकाल में भारतीय संगीत विदेशी हमलों के कारण दो पद्धतियों हिन्दुस्तानी या उत्तरी भारतीय संगीत और कर्नाटकी या दक्षणी भारतीय संगीत के अंतर्गत विभाजित हो चुका था। श्री गुरु नानक देव जी ने 'धुर की बाणी' को लोगों तक पहुँचाने के लिए विभिन्न स्थानों का दौरा किया जो चार उदासियों के नाम के साथ जाना जाता है। इन उदासियों के अंतर्गत आप दक्षिण भारत भी गये और वहां के सभ्याचार, आचार, व्यवहार, भाषा और संगीत का अध्ययन किया। श्री गुरु नानक देव जी ने दक्षिण भारत के रागों

को अपनी वाणी के गायन के लिए प्रयोग किया। श्री गुरू ग्रथ साहिब में अंकित 'दक्षणी' शब्द दक्षणी संगीत पद्धति का राग सूचक है पर इन रागों का दक्षिण पद्धति के राग होने के सम्बन्ध में विद्वानों में मत भेद पाये जाते हैं। फरीदकोटी टीका में दक्षणी को राग ना मानते हुए छंद की चाल का नाम दिया गया है।[16] डा. देविन्द्र सिंह विद्यार्थी के अनुसार, 'यदि दक्षणी शब्द महला १ आया होता परंतु यह आया महला १ के संकेत के बाद इस लिए इसको राग का सूचक समझना उचित नहीं।[17] पर श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित सिरलेख 'रामकली दक्षणी महला १'[18] इस बात का संकेत है कि यह दक्षणी पद्धति का राग है। डा. गुरनाम सिंह ने भी अपने शोध प्रबन्ध में इन रागों को दक्षणी पद्धति का राग स्वीकार किया है।[19] क्रियात्मक तौर पर इन रागों के स्वरूप केवल दक्षणी संगीत पद्धति में ही पाये जाते हैं, उत्तरी भारतीय संगीत में नहीं। इसलिए इन रागों को दक्षणी पद्धति के राग मानना ही उचित है। दक्षणी पद्धति के रागों का प्रयोग श्री गुरू ग्रंथ साहिब में केवल श्री गुरू नानक देव जी ने ही किया है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में सिरलेख के रूप में अंकित 'राग' क्यों जो वाणी को रागों के अंतर्गत गायन करने का निर्देश है, इसलिये गुरमति संगीत परम्परा में उत्तरी और दक्षणी पद्धति दोनों के रागों को समान सतिकार के साथ गाने का आदेश है। तेहरवीं शताब्दी में प. शारंगदेव ने इन दोनों पद्धतियों को मेलने का प्रयत्न किया पर व्यवहारिक तौर पर संभव न हो सका। गुरू साहिबान का दक्षणी पद्धति के रागों को अपनी वाणी के गायन हित प्रयोग करके दोनों संगीत पद्धतियों की मध्य की दूरी को खत्म करने में गुरमति संगीत परम्परा का महान योगदान है।

सनातनी राग :-गुरू साहिबान ने वाणी की सफल प्रस्तुति के लिये वाणी और राग को इन की प्रकृति की अंतरीवी सांझ, रसात्मक और भावात्मक आधार पर जोड़ने की सफल कोशिश की है। आप ने वाणी के गायन के लिए प्रयोग किये गये सनातनी काव्य रूपों के लिए शुद्ध रूप में मार्गी या स्थापित रागों का प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर प्रबंध गायन शैली के काव्य रूप अष्टपदी का प्रयोग सिरी, माझ, गऊड़ी, गूजरी, रामकली, प्रभाती रागों के अन्तर्गत किया गया है।

देशी राग :-गुरु साहिबान ने वाणी के संचार की संभावनाओं को बढ़ाने के लिए विभिन्न इलाकों की लोक परम्परा में विकसित रागों को वाणी के गायन हित प्रयोग किया है। उदाहरण के तौर पर माझ, आसा, आसा काफी, बिहागड़ा तिलंग, सूही, मारू, तुखारी, देशी राग के रूप में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

मौसमी राग :-गुरमति संगीत के अंतर्गत उपरोक्त रागों में कुछ राग इस तरह मिलते हैं जो मौसम के साथ सम्बन्धित हैं। इन रागों का गायन भी सम्बन्धित मौसम में हर समय करने की प्रथा है। वाणी का साधारण पाठ करने से ही राग से सम्बन्धित मौसम का आभास हो जाता है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज मौसमी राग बसंत और मल्हार रागों में मौसमों का वर्णन इस प्रकार है :

राग बसंत :—

…पहित बसंतै आगमनि तिस का करहु बिचारु ॥
नानक सो सालाहीऐ जि सभसै दे आधारु ॥[20]
…माहा माह सुहावड़ी चड़िआ सदा बसंतु ॥[21]
…करम पेड़ु साखा हरी धरमु फुलु फुल गिआनु ॥
पत परापति छाव घणी चूका मन अभिमानु ॥[22]
…रुति आइले सरस बसंत माहि ॥[23]
…बसंत चड़िआ फूली बनराई ॥[24]

राग मल्हार :—

…करऊ बिनऊ गुर अपने प्रीतम हरि वरु-आणि मिलावै ।
सुण घनघोर सीतलु मनु मोरा लाल रती गुन गावै ॥[25]
…चात्रिकु जल बिनु प्रिउ प्रिउ टेरै बिलप करै बिललाई ॥
…घनहर घोर दसौ दिसि बरसै बिनु जल प्यास न जाई ॥[26]
…नानक सावणि जे वसै चहु उमाहा होई ।
नागां मिरगां मछीआं रसीआं घरि धनु होई ॥[27]
…ऊनवि ऊनवि आयआ बरसै लाई झड़ी ॥
नानक भाणै चलै कंत कै सु माणै सदा रली ॥[28]
…गुरमुखि मलार रागु जो करहि तिन मनु तनु सीतलु होई ॥[29]
मलारु सीतल रागु है धिआइऐ शांति होई ॥[30]

गुरमति संगीत के राग प्रबंध से सम्बन्धित उक्त चर्चा से इस परम्परा के विशाल खजाने का सहिज ही आभास हो जाता है। जैसे कि हम ऊपर विचार कर आए हैं कि भारतीय संगीत में प्रमुख और केन्द्रीय इकाई के रूप में विद्यमान राग को गुरमति संगीत में मौलिक दृष्टिकोण से प्रयोग किया है क्योंकि इस प्रयोग का प्रयोजन कलात्मक नहीं बल्कि अध्यात्मिक है। रबी वाणी के संदेश को सर्व लोकाई तक संचारित करने के लिए जहां सनातनी और लोक कावि का शब्द रूप में प्रयोग किया गया है वहां इस शब्द को प्रस्तुति को हृदय में वसाने अथवा दृड़ाने के लिए संगीत का माध्यम अपनाया गया है और इस संगीत का मुख्य वाक है जो अपने रंजक गुणों द्वारा श्रोताओं के मन को वशीभूत कर, इसके इर्द गिर्द से तोड़ स्वरात्मक संसार में प्रवेश करवाता है। इस आनंदमय आत्म शुद्धी वाली अवस्था में वाणी का सहज प्रवेश और बोध गुरमति संगीत का प्रयोजन है।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब की राग परम्परा से सम्बन्धित अभी तक जो साहित्यकारों या गुरवाणी के व्याख्याकारों ने भी टिप्पणीयां की हैं इस लिये इस राग परम्परा का उल्लेख साधारण मात्र ही रहा है। जब कि इस परम्परा का यदि संगीत विज्ञान की दृष्टि से अध्ययन किया जाये तो यह मध्यकालीन राग परम्परा का एक मौलिक और अनूठा माडल है।

गुरू साहिब ने राग रागणी वर्गीकरण के झमेलों और बखेड़ों को पूर्ण रूप में समझते हुए अपनी वाणी के राग प्रबन्ध की सृजना के हित साधारण और सुखैन विधि अपनाई है जिस में शुद्ध, छायालग और संकीर्ण विधि का इस्तेमाल किया गया है। इस विधा के अंतर्गत मुख्य 31 राग और इन 31 रागों के अंतर्गत छायालग और संकीर्ण रागों का जिक्र है। इसके विना विभिन्न मौसमों और विभिन्न इलाकों के साथ सम्बन्धित रागों का प्रयोग भी किया गया है। इस से भिन्न अर्थों और बहु दिशाई प्रयोग का मनोरथ और वाणी को ज्यादा से ज्यादा लोकाई तक संचारित करना है। इसका मनोरथ केवल संचार की दृष्टि से है क्यों जो गुरमति संगीत का राग प्रबन्ध संचार मुख्य है और यह संचार का माध्यम भी है।

वर्तमान समय गुरमति संगीत में प्रयुक्त राग के एक से अधिक स्वरूप हमारे पास उपलब्ध हैं, यह हमारी अमीरी है। 18वीं शताब्दी में थाट परिवर्तन होने से भारतीय संगीत में रागों के स्वरूप में परिवर्तन आ गया परन्तु क्यों जो गुरमति संगीत भारतीय संगीत के शास्त्रीय नियमों से निरलेप स्वतन्त्र धारा के रूप में प्रवाहित हो रहा था। इस लिये इसके प्रचारकों में सीना-ब-सीना पुरातन रूप ही प्रचलित रहे। गुरमति संगीत के इन गायकों में प्रचलित रागों का मुख्य आधार गायन परम्परा है क्योंकि शास्त्र भी कियात्मक तत्वों पर ही आधारित होता है और वर्तमान समय गुरमति संगीत को शुद्ध परम्परा के बीज इस क्रियात्मक परम्परा में से ही प्राप्त हो सकते हैं। फिर भी इन स्वरूपों को वर्तमान राग सिद्धांत, राग शास्त्र के अनुसार स्वरूपबद्ध करके इसके प्रचलन को प्रवाणित और प्रमाणित बनाया जा सकता है।

गुरमति संगीत प्रबन्ध से सम्बन्धित उपरोक्त चर्चा से इस गौरव-शाली राग प्रबंध के बारे जितने भी तत्व खोज कर हम निखार सकें, यह हमारे अमीर विरसे की ही देन है। यह राग प्रबन्ध गुरमति संगीत को भारतीय और विश्व संगीत परम्परा में मौलिक और विलक्षण रूप प्रदान कराने में सहायक होता है। गुरमति संगीत परम्परा का स्वतन्त्र परम्परा के रूप में निखेड़ा करने के लिए राग प्रबन्ध मूल और विशिष्ट आधार है।

1. वार रामकली महला ५, **आदि ग्रंथ**, पृ. 958
2. ·····वही·····, पृ. 1423
3. बिलावल महला ५, ·····वही·····, पृ. 821
4. बृहत हिन्दी कोश (संपा. कालिका प्रसाद), पृ. 951
5. भरत मुनि **नाट्य शास्त्र**, अध्याय 28, श्लोक 4166
6. मतंग मुनी, **बृहददेशी** (संपा. बालकृष्ण गर्ग), श्लोक 279
7. **संगीत रत्नाकर** (भाग 2), श्लोक २
8. अहोबल, **संगीत पारिजात**, श्लोक 91
9. सक्सेना, महेश नारायण, **संगीत शास्त्र** (भाग दूसरा), पृ. 119

10. आदि ग्रंथ, पृ 152
11. ·····वही·····, पृ. 580
12. ····· वही·····, पृ. 843
13. ·····वही·····, पृ. 1033
14. ·····वही·····, पृ. 907
15. ·····वही·····, पृ. 1343
16. आदि श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी स्टीक (फरीदकोट वाला टीका) पृ. 126
17. गुरबानी के राग संबोध और सारथक्ता, पृ. 43
18. आदि ग्रंथ, पृ. 1033
19. Gurnam Singh (Dr.) Musicological Study of Guru Nanak Bani, Page 126
20. म. २, आदि ग्रंथ, पृ. 721
21. वसंत महला १, ·····वही·····, पृ. 1168
22. ·····वही····· वही
23. ·····वही····· वही
24. ·····वही····· वही पृ. 1177
25. मलार महला १, आदि ग्रंथ, पृ. 1254
26. मलार महला १, आदि ग्रंथ, पृ. 1273
27. सलोक महला २, ·····वही·····पृ. 1279
28. सलोक महला २, ·····वही·····, पृ. 1280
29. महला ३, ·····वही·····, पृ. 1285
30. महला ३, ·····वही·····, पृ. 1283

गुरमति संगीत में प्रयुक्त गायन रूप/शैलियां

गुरमति संगीत में प्रयुक्त गायन रूप/शैलियां

गुरमति संगीत के आधार ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दरज बाणी के संचार लिए गुरू साहिबान ने भिन्न-भिन्न गायन रूपों को प्रयोग में लिया। गुरबाणी के संदर्भ में गुरमति संगीत में प्रचलित गायन शैलियों के मौलिक रूप का अध्ययन करें तो इस गायन प्रबन्ध के विलक्षण नक्श हमारे सामने आते हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना क्यों जो रागात्मक है और समूचे श्री ग्रंथ साहिब से गुरमति संगीत का एक विशिष्ट प्रबन्ध उजागर होता है। जिसके आधार पर भिन्न-भिन्न गायन शैलियां रूप अपना निश्चित विधि विधान रखते हैं और गुरमति संगीत के दृष्टिकोण से इनका प्रमुख महत्व है।

गुरमति संगीत की इन गायन शैलियों का विषय जो कि बाणी रूप है भिन्न-भिन्न काव्य रूपों पर आधारित है। इन गायन शैलियों का विधि विधान निश्चित करने के लिए राग, रहाओ, अंक, घरु आदि संगीतक और काविक संकेत दिए गए हैं। यह संकेत इन गायन शैलियों का गायन विधान ही निश्चित करते हैं, इस विधान के आधार पर किसे गुरमति संगीत की गायन शैली की प्रस्तुति होती है। गुरमति संगीत की गायन शैलियां केवल कला प्रस्तुति नहीं, इस लिए इन गायन शैलियों का विषय बाणी/बाणी रूप/शब्द की प्रस्तुति का लक्ष्य श्रोते के मन में शब्द को बसाने बाणी का बोध करवाने और उसे उसके मन में सत्य का प्रकाश करना है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पहले सनातनी (शास्त्रीय) फिर लोक (देशी) काव्य रूप गायन शैलियों को रखा गया है जिनका वर्णन इस प्रकार है :

शास्त्रीय अंग की कीर्तन शैलियां : — शास्त्रीय अंग की कीर्तन गायन शैलियां वह कीर्तन गायन शलियां जो मूल रूप में भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रचलित हैं और इन गायन शैलियां को 'अंग' रूप में अपना कर इनसे सम्बन्धित काव्य रूप में बाणी को गुरमति संगीत प्रबन्ध के अंतर्गत निबंद्ध किया गया है। उदाहरण के तौर पर प्रबंध अंग से अष्टपदी, ध्रुपद से पद गायन और प्राचीन समय प्रचलित पंचतालेश्वर से पड़ताल गायन शैलियां हैं जो इस प्रकार हैं :

अष्टपदी :—अष्टपदी श्री गुरू ग्रंथ साहिब का महत्वपूण काव रूप है। इसका काविक और संगीतक रूप सनातनी उच्चता का धारणी है : अष्टपदी शब्द से ही स्पष्ट है कि यह आठ पदियां (अष्ट + पद) का संयह है। यह सनातनी काव के अंतर्गत आने वाला प्रचलित और स्थापित काव रूप है जिसमें दर्शन और धर्म के विभिन्न सिद्धांतों का वर्णन है। अष्टपदी अधीन गम्भीर किस्म के बौधिक विचारों का प्रगटावा है।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में श्री गुरू नानक देव जी, श्री गुरू अमर दास जी, श्री गुरू रामदास जी, श्री गुरू अर्जुन देव जी ने अपनी बाणी के गायन लिए अष्टपदी का प्रयोग किया। गुरबाणी के अंतर्गत अष्टपदी रूप अधीन मनुष्य जीवन के साधारण किस्म के विषयों को मूर्तिमान किया गया है।

आठ पदों की रचना को अष्टपदी कहते हैं। इस काव रूप का कोई खास तोल तुकांत नहीं। हां इसमें आठ छंद एक प्रबंध में लिखे जाते हैं।[1] भाई काहन सिंह नाभा अनुसार, 'यह छंद की खास जाति नहीं है। जिस प्रबंध में आठ छंद (पद) इकट्ठे होने पर उसकी 'अष्टपदी' संज्ञा है।[2]

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अलग-अलग छंदों में अष्टपदी मिलती है। उदाहरण के तौर पर इसके कुछ नमूने इस प्रकार है :-

—राग गउड़ी अधीन 'सुखमनी' बाणी की रचना चौपई छंद में है :

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥[3]

—राग मल्हार में दर्ज अष्टपदी सार छंद में है :

चकवी नैन नींद नहि चाहै बिनु पिर नींद न पाई ॥
सूरु चरे प्रिउ देखै नैनी निवि निवि लागै पाई ॥ १ ॥[4]

—राग मारू की अष्टपदी जो निशानी छंद में है :

हुकमु भइआ रहणा नही धुरि फाटे चीरै ॥
ऐहु मनु अवगणि बाधिआ सहु देह सरीरै ॥[5]

गुरबाणी में अष्टपदी अधीन पदियां की गिनती आठ से ज्यादा

नौ, दस, ग्यारह और आठ से कम हो कर सात भी मिलती है। अष्ट-पदी में इन पदियों के इलावा इनकी तुकों में भी भिन्नता पाई जाती है। पदे में चार तुकों के बिना तीन, दो या एक तुक भी दृष्टिगोचर होती है। मात्रिक पक्ष से भी अष्टपदियां विलक्षणता की धारणी हैं। अष्टपदी में तुकों और मात्राओं में इतनी अधिक भिन्नता करके ही कई अष्टपदियों का तोल बाकी कवि रूपों से जा मिलता है। जैसे राग सूही में दूसरी अष्टपदी की तुकें दोहरे का रूप धारण करती प्रतीत होती हैं और अंतिम तीन तुकें अड़िल के रूप से मिलती हैं। राग रामकली में आठवीं और नौवीं अष्टपदी एक-एक तुक में संकलित है पर तोल दवईऐ साथ मिलता है।"

भारतीय संगीत को देखने से पता चलता है कि गुरू साहिबान से पूर्व अष्टपदी का 'प्रबंध शैली' के रूप में प्रचार था। प्रबंध एक विशेष नियमबद्ध रचना है, जिस के चार भाग या धातु उदग्राह, ध्रुव, मेलापक आभोग है। 12वीं सदी के प्रसिद्ध भगत कवि और महान् संगीतकार जै देव द्वारा रचित 'गीत गोविंद' की महत्वपूर्ण रचनाएं अष्टपदियां प्रबंध गायन का उत्कृष्ट नमूना हैं। इस महान् रचना 'गीत गोविंद' से प्रबंध शैली की प्राचीनता और महानता के बारे पता चलता है। 'गीत गोविंद' आठ पदियां की रचनाएं अष्टपदियां जहां भारतीय साहित्य की महत्वपूर्ण रचनाएं हैं वहां भारतीय संगीत में गायन शैली की तरफ से इनका वर्णनयोग स्थान है। 'गीत गोविंद' की रचनाएं अष्टपदियां में प्रबंध के उदग्राह, ध्रुव धातु तो मिलते हैं पर मेलापक नहीं। गुरवाणी अधीन अष्टपदियों में भी प्रबंध के उदग्राह, ध्रुव, अंतरे के बिना मेलापक आदि धातुओं का प्रयोग नहीं किया गया। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज अष्टपदियां गुरमति संगीत प्रबंध के अंतर्गत हैं। श्री गुरू नानक देव जी द्वारा रचित एक अष्टपदी का संगीतक विश्लेशण निम्नलिखित अनुसार है :

सिरी राग महला १ ॥

आपे गुण आपे कथे आपे सुणि वीचारु ॥
आपे रतनु परखि तू आपे मोलि अपारु ॥
साचउ मानु महतु तू आपे देवणहारु ॥ १ ॥

हरि जीउ तू करता करतारु ॥
जिउ भावै तिउ राखु तू हरिनामु मिलै आचारु ॥ १ ॥ रहाओ ॥
आपे हीरा निरमला आपे रंगु मजीठु ॥
आपे मोती ऊजलो आपे भगत बसीठु ॥
गुर कै शब्द सलाहणा घटि घटि डीठु अडीठु ॥ २ ॥
आपे सागरु बोहिथा आपे पारु अपारु ॥
साची वाट सुजाणु तू शब्द लघावणहारु ॥
निडरिआ डरु जाणीऐ बाझु गुरु गुबारु ॥ ३ ॥
असथिरु करता देखीऐ होरु केती आवै जाए ॥
आपे निरमलु एकु तू होर बंधी धंधै पाए ॥
गुरि राखे से उबरे साचि सिउ लिव लाए ॥ ४ ॥
हरि जीउ शब्द पछाणीऐ साचि रते गुरवाकि ॥
तितु तनि मैलि न लगई सच घरि जिसु उताकु ॥
नदरि करे सचु पाईऐ बिनु नावै किआ साकु ॥ ५ ॥
जिनी सचु पछाणिआ से सुखीऐ जुग चारि ॥
हउमै त्रिसना मारि कै सचु रखिआ उरधारि ॥
जग महि लाहा एकु नामु पाईऐ गुर वीचारि ॥ ६ ॥
साचउ वखरु लादीऐ लाभु सदा सचु रासि ॥
साची दरगह बैसई भगति सची अरदासि ॥
पति सिउ लेखा निबड़ै रामनामु परगासि ॥ ७ ॥
ऊचा ऊचउ आखीऐ कहउ न देखिआ जाए ॥
जह देखा तह एकु तू सतिगुरि दीआ दिखाए ॥
जोति निरंतरि जाणीऐ नानक सहजि सुभाए ॥ ८ ॥

उपरोक्त अष्टपदी राग सिरी अधीन गाई जाने वाली रचना है। गुरमति संगीत अनुसार अष्टपदी के सभी अंग अंकों सहित हैं। अष्टपदी में पहली दो सतरें जिनके पश्चात '१' अंक मिलता है, उदग्राह भाग है। उदग्राह के पश्चात रहाओ की तुक 'ध्रुव' है जो स्थाई के तौर पर क्रियाशील रहती है पर अष्टपदी में आम तौर पर पहले पद के पश्चात रहाओ की तुक आती है पर कई अष्टपदियों में 'रहाओ' पहले भी दृष्टिगोचर होता है। जैसे राग सारंग में श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित अष्टपदी में रहाओ की तुक पहले आई है। प्रबंध के दो धातु

उदग्राह और ध्रुव के बिना अष्टपदियों की बाकी तुकों का अंतरे के रूप में गायन किया जाता है। गुरु साहिबान द्वारा रचित अष्टपदियां प्रबंध गायन का उच्चत्तम नमूना हैं। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज अष्ट-पदियों को प्रबंध अंग में गायन करने की परंपरा है। पर समय के अन्तराल के कारण प्रबंध अंग में अष्टपदी का गायन प्रचलन नहीं है पर इसकी खोज का स्रोत या सीमा प्राचीन प्रबंध ही है।

पदे :— पद काव्य का पुरातन और प्रचलित काव्य-रूप है। संगीत में इसको गायन करने की अपनी ही परंपरा है। संगीत भाषा में पद की परिभाषा इस तरह दी गई है, जिन विशेष अक्षर या वाक समूहों में किसे गत या गीत का बोध किया जाता है, उस शब्दावली को 'पद' कहा जाता है। इसके इलावा कविता के भिन्न-भिन्न चरण या भाग को भी साहित्य में पद कहा जाता है।[8] पद को राग पद, राग प्रकाशक पद और स्वर शब्द भी कहा जाता है।[9]

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में लगभग समूह गुरु साहिबान और संतों भगतों ने पद गायन शैली का प्रयोग अपनी बाणी के गायन के लिए किया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में पदियां को 'शब्द' भी कहा जाता है और इनके गायन को 'शब्द गायन' का नाम दिया जाता है।

पदे सदीयों कविता का प्रसिद्ध काव्य-रूप माना जाता है। पद से भाव पंक्ति या पंक्ति समूह है। पदियां की पंक्तियों को तुकें भी कहा जाता है। भाई काहन सिंह नाभा अनुसार, 'वह छंद जो काव्य, वर्ण, गण और मात्रा के नियम में हो उस को 'पद' कहा जाता है।[10] श्री गुरु ग्रंथ साहिब में बंद या तुकों की संख्या के आधार पर ही पदियों के नाम सिरलेख रूप में अंकित हैं। दो बंद के पद को दुपदे, तीन बंद के पदे को तिपदे, चार बंद के पदे को चउपदे। इस तरह पंचपदे और छिपदे आदि रचनाएं हैं। पद गायन को मध्यकालीन परंपरा के अंतर्गत ध्रुपद अंग या ध्रुपद शैली में गाए जाने की रीत प्रचार में थी। ध्रुपद के संबंध में यह कहा जाता है कि 'ध्रुव' का अर्थ 'अचल' या 'चिरस्थाई' है। इन अर्थों से केवल ईश्वर ही ध्रुव है और उसका गुण कीर्तन सूचक पद को ध्रुपद कहा जाता है। ..... ईश्वर की गुण गाथा में ध्रुपद का विवहार प्राचीन काल से ही है। ..... गायन में ध्रुपद के तालों में भी गम्भीरता है। लघ प्रकृति के ताल ध्रुपद में

प्रयोग नहीं होते। ध्रुपद नरपतिगण के गुण कीर्तन के रूप में रचे गए हैं।[11] मध्यकालीन भारतीय संगीत के संगीताचार्य स्वामी हरिदास और उनके शिष्य तानसैन, बैजू बावरा, रामदास आदि ने ध्रुपद शैली में कई रचनाएं की और इन्होंने अपने गायन द्वारा इसका खूब प्रचार किया। संत कवियों में भगत कबीर, सूरदास आदि द्वारा रचित पदे भी ध्रुपद गायन शैली के उच्त्तम नमूने हैं।

आदि ग्रंथ श्री गुरू ग्रंथ साहिब में पद शैली गुरमति संगीत प्रबंध अंतर्गत संकेतिक नियम (राग, रहाओ, अंक, घरु आदि) की धारणी है, जो इस रचना के गायन लिए विवहारिक रूप में सहायक होते हैं। पदे अधीन रहाओ की तुक जिसमें शब्द का केन्द्रीय भाव मौजूद होता है, ध्रुपद शैली में इस को 'ध्रुव का नाम दीया गया है। इस को शब्द में केन्द्र मान कर बार-बार गायन करने की परंम्परा है। शब्द की तुकों के अंत में १, २, ३ के रूप में अंक दर्ज हैं जो अंतरियां की सीमा बतलाते हैं जो कि बाणी प्रबंध अनुसार स्थाई या रहाओ की तुक का बार-बार गायन हो सके। इस तरह अंक शब्द रचना के अंतरा, संचारी, आभोग जेसे विभिन्न ध्रुपद नियमों अनुसार कार्यशील रहते हैं। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में बाणी की प्रधानता और बाणी के निवेकले संगीत प्रबंध करके ध्रुपद संगीत प्रबंध करके ध्रुपद गायन के इन शास्त्रीय नियमों में छूट भी ले ली जाती है। उदाहरण के तौर पर दुपदे, तिपदे आदि में ध्रुपद के सभी अंग नहीं हैं पर इनका गायन ध्रुपद अंग से ही किया जाता है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में सभी से अधिक पद गायन शैली का प्रयोग किया गया है। इससे पद शैली को गुरमति संगीत की प्रधान शली कहा जा सकता है। गुरबाणी की विभिन्न पद रचनाएं का ध्रुपद अग से गाए जाने की परंम्परा बाणी प्रबंध की विशिष्टता है।

होली :— गुरमति संगीत में होली से सम्बन्धित शब्दों को भारतीय संगीत में प्रचलित धमार शैली पर गायन करने की परंम्परा है। धमार ताल पर इसका गायन करने पर इसको धमार शैली कहा जाता है। धमार शैली श्रृंगार रस प्रधान है। भारतीय संगीत में धमार गीतों में कृष्ण और गोपियों की होली लीलाएं का वर्णन होने कारण इसको 'होली का गीत' भी कहते हैं। इसके दो भाग स्थाई, अंतरा होते

हैं जिस को विभिन्न लयकारियों, बोलतानों आदि से सजाया जाता है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में भी दर्ज होली के शब्दों में रहाओ का प्रयोग करके इसको स्थाई, अंतरे में विभाजित किया गया है। इसमें रहाओ की तुक के इलावा शेष सभी तुकें अंतरे की होती हैं। इस पर प्रत्येक अंतरे की तुक के बाद रहाओ (स्थाई) की तुक का गायन किया जाता है। गुरबाणी में होली के शब्दों को गुरमति संगीत प्रबन्ध अनुसार धमार अंग से गायन करने की परंम्परा बाणी प्रबंध उच्चता का धारणी है।

पड़ताल :— पड़ताल गुरमति संगीत का एक विशिष्ट और अप्रसिद्ध काव्य रूप है जो संगीत में गायन के पक्ष से भी शेष शैलियां से निवेकला और महत्वपूर्ण स्थान रखती है। वर्तमान समय पड़ताल शैली का भारतीय संगीत में प्रचलन नहीं है परन्तु पुरातन भारतीय संगीत ग्रंथों में 'पंचतालेश्वर' नामक गायन शैली साथ इसका अस्पष्ट तौर से संबंध जोड़ा है।[12] गुरमति संगीत के आधार ग्रंथ श्री गुरू ग्रंथ साहिब में भिन्न-भिन्न रागां अधीन श्री गुरू रामदास जी की 19 और श्री गुरू अर्जुन देव जी की 36 पड़तालें दर्ज हैं।

पड़ताल शब्द की रचना पड़+ताल शब्दों के मेल से हुई है। इसके शाब्दिक अर्थों को देखा जाए, तो पडताल से भाव शब्द को पाठ ताल के आधार पर किया जाए। पड़ताल को पट ताल, परत ताल, पंच ताल, पड़त ताल आदि नामों से सम्बोन्धित किया जाता है। एक शब्द या पद की अलग-अलग तुकों को अलग-अलग तालों में गाने को 'पड़ताल' कहा जाता है। जैसे एक बन्दिश में अलग-अलग रागों के प्रयोग को राग सागर या राग माला कहते हैं, उसी तरह ही एक बन्दिश में अलग-अलग तालों के अंतर्गत गायन करना 'पड़ताल' है।[13] गुरमति संगीत की शेष विशिष्ट गायन शैलियों की तरह इस अदुति गायन शैली पड़ताल का सरूप समय के काल चक्कर में अप्रचलित हो गया। सो इस शैली के तालों से सम्बन्धित विद्धवानों में मत भेद हो गए। भाई काहन सिंह नाभा अनुसार, 'यह छंद जाति नहीं, किंतु चारताल का भेद पटताल है, इस ताल में गाए जाने वाले पदां की 'पड़ताल' संज्ञा हो गई है, वेशक वह किसी धारणा के हों।'[14] पर पड़ताल को चारताल का भेद पटताल नहीं माना जा सकता क्योंकि श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज पड़ताल के संबंध में तीन प्रकार

के सिरलेख अंकित हैं :-

—कानड़ा महला ४ पड़ताल घरु ५[14]
—प्रभाती महला ५ बिभास पड़ताल[15]
—सारंग महला ४ घरु ५ दुपदे पड़ताल[16]

उपरोक्त सिरलेखों से स्पष्ट है कि राग, महला, घरु, कावि रूप और पड़ताल अलग-अलग संकेत हैं। पड़ताल को यदि चारताल का भेद पटताल मान लें तो घरु के संबंध में प्रचलित मत मूल से ही गलत सिद्ध हो जाता है। यहाँ ही बस नहीं घरु १५, १३ ५ आदि प्रयोग किए गए हैं जो इस बात का संकेत हैं कि पड़ताल केवल किसी एक ताल का संकेत नहीं। प्राचिन कीर्तनीयां के अनुसार पड़ताल को पांच तालों के अंतर्गत गानन करना है। कुछ रागी यह विचार मानते हैं कि इसका आरम्भ पांच ताल की सवारी से ही करना है। इन विचारों को छोड़ कर सर्व प्रवाणित विचार अनुसार इस शैली में तालों का परताव और तालों की गिनती पांच होनी चाहिए। पड़ताल शैली के संबंध में उपरोक्त चिन्ह उपलब्ध होते हैं :

—पड़ताल से भाव शब्द रचता जिस में तालों को बदल-बदल कर प्रयोग किया जाता है।
—पड़ताल अधीन शब्द की स्थाई की तुक के लिए एक ताल ही रहता है पर अन्तरे की तुकों के गायन लिए अलग-अलग पांच तालों का प्रयोग किया जाता है।
—भारतीय संगीत में पड़ताल गायकी का प्रचलन नहीं है।

पड़ताल में प्रयोग किये जाते शब्दों की लयात्मिकता, विभिन्न तालों के प्रयोग में यह देखना जरूरी है कि भारतीय छंद विधान अनुसार पड़ताल किस छंद के साथ समानता रखती है। भारतीय कावि शास्त्र अनुसार संगीत छंद ऐसा छंद है जिस में वाद्य संगीत अथवा मृदंग के बोल आते हैं और जिनका पाठ लय, ताल का ध्यान रख कर किया जाता है।[17] दसम ग्रंथ में भी इस छंद का प्रयोग किया गया है, जिसके साधारण पाठ करने से ही पता लगता है कि इसमें प्रयोग किए गए शब्द ताल और मृदंग के बोलों अनुसार हैं। पड़ताल रचना के शब्दों की लय भी भिन्न-भिन्न तालों के अनुरूप हैं। भारतीय संगीत

कोश में दर्ज 'पड़ाल' नामक तकनीकी शब्द की परिभाषा इस प्रकार है, "मृदंग के बोलों के विभिन्न शब्द या वाद्य जिस रूप में, हाथों द्वारा निकाले जाते हैं, उस को 'पड़ाल' कहा जाता है। दूसरे अर्थों के अनुसार किसे भी श्लोक की वाणी के छंद के अनुरूप अवनध वाद्य पर वादन उपयोगी बोलों को शब्द वाणी का 'पड़ताल' कहा जाता है।[19] इस परिभाषा से पता चलता है कि मृदंग आदि के बोलों के धारणो कावि बोलों की रचना को 'पड़ताल' कहा जाता है। पड़ताल में ताल का बार-बार परताव भी इसी लयात्मिकता की विभिन्नता ऊपर आधारित है।

कुछ विद्वानों का विचार है कि अंतरे की अलग-अलग तुकों के गायन के लिए प्रयोग किए जाने वाले तालों की लय स्थाई की तुक के लिए प्रयोग किए गए ताल की मात्राएं के समान हो। अंतरे की यह तुकें सम्बन्धित ताल के एक, दो या अधिक आवर्तनों की भी हो सकती हैं।

कुछ रागी सिंह पड़ताल का गायन पाँच तालो में मानते हैं पर श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज पड़तालों के अन्तरे को तुकें दो या तीन भी मिलती हैं। उदाहरण के तौर पर राग मल्हार अधीन पड़ताल 'घनु गरजत गोबिंद रूप'[20] अंतरे की दो तुक हैं। इस लिए प्रत्येक पड़ताल में पांच तालों का प्रयोग नहीं हो सकता।

पड़ताल शैली की लयात्मिकता, विभिन्न तालों के प्रयोग से इस में कलात्मक पक्ष भारु दृष्टिगोचर होता है पर इस तरह नहीं है। पड़ताल एक कठिन गायन शैली है। पड़ताल के गायन लिए गायक को जहां ज्यादा अभ्यास की आवश्यकता है वहां ध्रुपद, धमार आदि गायन शैलियां का पूर्ण ज्ञान होना भी आवश्यक है क्यों जो इस गायकी की भिन्न-भिन्न परतों में इन गायन शैलियों के रंग भी नज़र आते हैं। रियाज़ से तालों का बदलाव सहिज रूप में हो सकता है और गुरमति अनुसार शब्द प्रधान गायकी के लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है।

पड़ताल में विभिन्न तालों के प्रयोग होने के बावजूद राग एक ही रहता है। पड़ताल का गायन करने लिए शेष शैलियों की तरह रहाओ की तुक को स्थाई रूप में किसे एक हो ताल के अंतर्गत रखा

जाता है। अंतरे की तुकों को विभिन्न तालों अधीन गायन उपरांत फिर स्थाई ताल में परता जाता है। अंतरे की तुक के पीछे ताल साथ तिहाई लगा कर स्थाई की तुक का गायन किया जाता है। अगर तिहाई न हो तो शब्दों का दुहराव करके या तान मुका मुकाया जाता है। इसके इलावा साधारण रूप में सम से स्थाई में प्रवेश किया जाता है।

उपरोक्त विशलेषण से पड़ताल गायन के निवेकले सरुप का आभास सहिजे ही हो जाता है। इस तरह पड़ताल गायकी जहां कलात्मक उच्चता की धारणी है वहां यह भरपूर रियाज, अमीर आवाज़ और संगीत का उत्तम ज्ञान चाहती है। गुरमति संगीत का यह गायन रुप श्री गुरू ग्रंथ साहिब की समूची वाणी के गायन मुखी स्वभाव को पूर्ण रूप में उजागर करता है और इसको सीधे तौर पर संगीत के साथ जोड़ता है। जो संगीत गुरू ग्रंथ साहिब जी की वाणी दर्शन गुरमति का अनुसारी है, वह गुरमति संगीत है। वर्तमान समय इस गायकी की सुरक्षा, संभाल और प्रचार इस परम्परा के विरसे को फिर सुरजीत करने का विशेष तौर पर यत्न होगा।

लोक अंग की कीर्तन शैलियां :

लोक अंग की कीर्तन गायन शैलियां वह हैं जो अलग-अलग जातों, प्रांतों के मनुष्य जीवन में निजी सामूहिक भावों को प्रकट करने के लिए प्रयोग होती हैं। गुरमति संगीत अंतर्गत गुरू साहिबान ने वाणी के सन्देश को सरब लोकाई तक पहुँचाने के लिए लोक अंग की शैलियों का भी प्रयोग किया। गुरवाणी अधीन इन लोक कावि रुपों को गुरमति संगीत का अंकुश लगा कर इनके मध्य आज़ादी को अनुशासित किया गया है। यह अनुशासनबद्धता इनके भाव अभिव्यक्ति में किसी किस्म की रुकावट नहीं। बल्कि विषय की सहिज प्रस्तुति में सहायक है। गुरवाणी में प्रयुक्त छंद, अलाहुणी, छोड़ियां, वार, मुंदावणी, अंजुली आदि लोक शैलियां जहां लोक मन की अभिव्यक्ति के साथ जुड़ी हुई हैं वहां यह एक विशिष्ट संगीत की धारणी हैं। इन लोक रूपों को राग, धुनि, रहाओ, अंक आदि संकेतों के साथ सरुपित किया गया है। इनके बारे विस्तृत वर्णन इस प्रकार है।

छंत :—छंत पंजाबी लोक कावि का एक अंग है। छंत के संबंध में विद्वानों ने भिन्न-भिन्न अर्थ लिए हैं। छंत संस्कृत के छंदस शब्द का विकसित रूप है और इसमें मात्रा, वर्ण, यति आदि के नियम हैं।[31] भाई काहन सिंह नाभा अनुसार, 'पद कावि को छंत कहा जाता है।[32] भाई वीर सिंह जी ने इसको कावि की कोई रचना, हरि जस का गीत कहा है।[33] लोगों में इसका प्रयोग उन गीतों लिए होता है जो विवाह के अवसर पर दूल्हा अपनी सालीयों को सुनाता है।[34] विवाह शादी के मौके पर गाए जाने वाले गीतों को छंत कहा जाता है। छंत श्रृंगार कावि का उत्तम नमूना है। पंजाबी लोक छंत में छंत की तुकों को दो भागों में विभाजित करके और प्रत्येक भाग के अन्तिम शब्द को लम्बा करके टिकाअ सहित गायन किया जाता है।

इन छंतों का गायन ज्यादातर पीलू, खमाज रागों में किया जाता है। गुरबाणी में छंत कावि के अन्तर्गत श्री गुरू नानक देव जी, श्री गुरू अमरदास जी, श्री गुरू रामदास जी, श्री गुरू अर्जुन देव जी की वाणी विभिन्न रागों (गउड़ी, गउड़ी पूर्बी, आसा, वंडहंस, धनासरी, बिलावल दक्षणी आदि) के अन्तर्गत दर्ज हैं। छंत के आम तौर पर चार बंद होते हैं और प्रत्येक बंद में छः तुकें होती हैं पर गुरबाणी में छंत के पदियां की संख्या सात, आठ, नौ और सत्तरह भी मिलती हैं। छंत में दर्ज अंक एक छंत पूरा होने का सूचक है। छंतों का गायन क्रमवार गाने की रीति है। इस लिए छंतों को स्थाई, अन्तरे में विभाजित नहीं किया गया। गुरबाणी में अंकित छंत कावि जहां मूल लोक कावि की शब्दावली, बिम्बों अथवा प्रतीकों की धारणी है वहां इसके धुन के सरौंदीपण को कायम रखने के लिए लय अनुसार शब्दों का लमकाय, शब्दों और स्वरों का दुहराव बड़े स्वाभाविक रूप में मौजूद है। सिक्ख जगत में रात को श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी के सुखासन उपरांत महाराज की सवारी को विश्राम के स्थान पर ले जाते समय 'जिथै बहे मेरा सतिगुरू' छंत का गायन किया जाता है। इसका गायन चलते-चलते बिना साज से सामूहिक रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त 'आसा की वार' में श्री गुरू रामदास जी रचित छंतों का रोज़ाना गायन करने की परम्परा है।

अलाहुणी :

अलाहुणी शब्द अलाहुणा से बना है, जिसका अर्थ है गाना। अलाहुणी का अर्थ है शलाघा या उस्तति की कविता, वह गीत जिसमें किसी के गुण गाये जायें। विशेष करके मृत्यु प्राणी के गुण कर्म कह के जो गीत गाया जाता है, उसका नाम अलाहुणी है।[5] अलाहुणी सोगमय कावि रूप है। जिसमें मृतक प्राणी के गुणों को दुखदायक स्वरों में सलाहा जाता है।

अलाहुणी गायन करने की अपनी ही परम्परा है। यह मृतक प्राणी की बिरादरी की सभी औरतें मिल कर गाती हैं। इस कावि रूप में मरासण मुखी होती है। सभी औरतें एक दायरे में खड़ी हो जाती हैं और मध्य में मरासण खड़ती है। मरासण अलाहुणी बोलती है और सभी औरतें पीछे-पीछे बोलती हैं और साथ ही सभी अपने हाथ छाती और जांघों पर मार कर पिटती हैं, सभी के हाथ एक लय में उठते है। अलाहुणी का गायन बिना साज से किया जाता है। इसकी अपनी ही एक पहचान है। इसमें खास हेक, आलाप या लमकाय होता है जो उस दृश्य को और सोगमय, करुणामय बना देता है। अलाहुणी को किसी और मौके पर गायन करना अशुभ माना जाता है। अलाहुणियां उमर और लिंग के अनुसार होती हैं जैसे बच्चे की मृत्यु पर अलाहुणी में ममता की झलक विशेष दिखाई देती है, जवान की मृत्यु पर अलाहुणी में करुणा रस विशेष होता है। इस तरह मर्द की मौत पर अलाहुणी में मर्दाना गुण और जनानी की मृत्यु पर इसमें जनाना गुण होते हैं।

वैण और कीरने भी अलाहुणियां का ही रूप है पर यह दो स्त्रियां एक दूसरे के गल मिलकर ही गाती हैं या अकेली स्त्री मुंह ढक कर गाती हैं। पर अलाहुणी समूह स्त्रियां गायन करती हैं। अलाहुणियां की कई वंनगियां मिलती हैं पर सभी में एक भावना होती है दिली वेदना और अरमानों का प्रगटावा।[6]

गुरबाणी के अंतर्गत अलाहुणी में संसार को नाशमान बताते हुये, जीव को परमात्मा की रजा में रहने, उत्तम काम करने, मौत को याद रखने और प्रभ भक्ति का उपदेश दिया है। अलाहुणी का गायन प्राणी

के मृत्यु के उपरांत देह को दाह देने के बाद किया जाता है।[17] गुरमति संगीत के आधार ग्रंथ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कुल नौ अलाहुणियां हैं जिनमें से पांच श्री गुरु नानक देव जी और चार गुरु अमरदास जी द्वारा राग वडहंस के अधीन रचित हैं। इनको भैरवी राग में भी गायन करने की परम्परा है।[18] श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज अलाहुणी के चार बंद हैं और प्रत्येक बंद में छः तुकें अंकित हैं पर राग वडहंस के दक्षिणी प्रकार की अलाहुणी आठ बंद और प्रत्येक बंद चार तुकों का धारणी है। इसमें स्थाई के रूप में रहाओ की तुक भी अंकित है जब कि शेष अलाहुणियों को स्थाई अन्तरे में विभाजित नहीं किया गया, यह क्रमवार ही गाई जाती हैं। अलाहुणी के अनुकूल वातावरण के लिए जहां रोवण, मरण, रोईऐ, विछोड़ा, पछुताये आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है वहां गायन की मूल भावना को ध्यान में रखते हुए लमकाव और हेक के अनुकूल अंतिम शब्दों का प्रयोग किया गया है जो अलाहुणी की खास पहचान है।

मुंदावणी :- मुंदावणी का अर्थ है बुझारत, अड़ाउणी, जिसमें भाव या अर्थ मुंदकर, बंद करके या छिपाकर रखा हो, ऐसी बात जो कोई जल्दी के साथ न समझ सके।[19] मुंदावणी एक रीत है जो पोठेहार में अब तक भी प्रचलित है। इसके अनुसार बारात जब खाने के लिए बैठती है तो लड़कियां बुझारतें डाल कर थाली बांध देती हैं, वह जब उसका अर्थ बता देती हैं तो बारात खाना खाती है। इसको भी मुंदावणी कहा जाता है। इन गीतों में थाल में पड़ी वस्तुओं का जिक्र होता है। भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार, 'मुदावणी मुहर या छाप लगाने की क्रिया है। मुंदावणी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के विषय के अनुसार इसकी अन्तिम मुहर है। इसके संपादन ने स्पष्ट कर दिया है कि इस महान ग्रंथ (थाल) में सति, संतोष और नाम जो कुल काइनात का आसरा है, जो कोई इस नाम को खायेगा, विचार करेगा उसका कल्याण होगा। जाहिर है मुंदावणी गुरु ग्रंथ साहिब में दार्शनिक बुझारत के अर्थों में भी, मुहर के अर्थों में भी है।[20] सिक्ख धर्म में मुंदावणी का श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पाठ के भोग समय या समाप्ति समय और रोज़ाना सन्ध्या के रहिरास पाठ में भी गायन करने की परम्परा है। इसका गायन बिना साज़ के सामूहिक रूप में

किया जाता है।

घोड़ीयां :

घोड़ीयां पंजाब का लोकप्रिय कावि रूप है। विवाह के मौके पर दुल्हे को घोड़ी चढ़ते समय उनकी बहनें अपने भाई का शगन मनाने लिए जिस प्रकार का गीत गाती हैं, घोड़ी लोक कावि रूप के अंतर्गत जाना जाता है। घोड़ीयों में तुक के अन्तिम शब्द को विशेष लमकाय सहित गायन किया जाता है और इसलिए किसी भी साज का प्रयोग नहीं किया जाता पर विवाह के कुछ दिन पहले शगन के लिये गाये गीत घोड़ी के लिए ढोलक का प्रयोग किया जाता है।

श्री गुरू ग्रंथ साहिब में श्री गुरू रामदास जी ने अपनी वाणी के लिए इस कावि रूप का प्रयोग किया है। श्री गुरू रामदास जी की राग वडहंस के अंतर्गत दो घोड़ीयां अंकित हैं, जिसमें परमात्मा का नाम सिमरण करके प्रभु के मिलाप के साधनों का वर्णन है। इसमें मनुष्य देह को घोड़ी के प्रतीक द्वारा रूपमान किया गया है। उस जीवात्मक को धन्य योग्य बताया गया है, जो देह रूप घोड़ी पर उस प्रभु की सिफल सलाह की काठी पहन कर, गुरू के ज्ञान को लगाम बना कर, इस संसार के कठिन मार्गों को पार करती हुई लोक परलोक की यात्रा तह करती हैं।

गुरू साहिबान ने घोड़ियों के लिए गुरमति संगीत प्रबन्ध को ध्यान में रखते हुए शास्त्रीय संगीतक संकेत राग, रहाओ और अंकों का प्रयोग किया। यह घोड़ीयां स्थाई, अंतरे में विभाजित होने के कारण इसको लोक संगीत की तरह क्रमवार गायन करने की बजाये अंतरों सहित गायन करने की परम्परा है।

अंजुली :- पानी की चूली देवतों के पित्रों को अर्पण करने की रीति के साथ सम्बन्धित कावि रूप अंजुली है। लोक विश्वास अनुसार यह पानी मरे हुए प्राणी को अगले लोक में प्राप्त होता है। श्री गुरू नानक देव जी की मारु राग में दो अंजुलियां दर्ज हैं। रूपकार की दृष्टि से यह दोनों रचनाओं में आठ-आठ बंद हैं और प्रत्येक बंद की पहली दो तुकें छोटी हैं और तीसरी तुक लम्बी है। इसमें रहाओ की तुक का पालन नहीं किया गया। इन रचनाओं में विरख के रूप से संसार की नाशमानता का वर्णन है।

सिख कीर्तन में प्रयुक्त शैलियों से सम्बन्धित की गई चर्चा से स्पष्ट है कि गुरमति संगीत परम्परा को सिक्ख गुरू साहिबानों ने व्यवहारिक रूप में स्थापित किया। गुरमति संगीत के इस व्यवहारिक रूप का सैद्धान्तिक आधार श्री गुरू ग्रंथ साहिब से उजागर होने वाला गुरमति संगीत प्रबन्ध है। यह संगीत प्रबन्ध श्री गुरू नानक देव जी से लेकर समूह गुरू साहिबान की वाणी के गायन हित और वाणी के प्रयोजन की सिद्धि के लिये सृजन किया गया है। गुरमति संगीत में प्रयोग होने वाली कीर्तन गायन शैलियों के सम्बन्ध में की गई चर्चा से स्पष्ट है कि यह शास्त्रीय और लोक अंग का धारणी है। गुरमति संगीत की इन गायन शैलियों की यह विलक्षणता भी है कि इन शैलियों को शास्त्रीय संगीत के विभिन्न सिद्धान्तों द्वारा संगीत बद्ध करने की परम्परा है। यह सिद्धान्त चाहे भारतीय शास्त्रीय संगीत के आधार से उत्पन्न हुये हैं पर इन में भारतीय शास्त्रीय संगीत के अनुशासन की कट्टरता के साथ गुरमति संगीत के अनुशासन का बंधेज है। इसके अंतर्गत अध्यात्म आनंद और अध्यात्म बोध का लक्ष्य निर्धारण है। उदाहरण के तौर पर इन शैलियों को शास्त्रीय संगीत की शैलियों की तरह राग और स्थाई, अंतरा भागों में निबद्ध करने के संकेत पर सिरलेख दिये गये हैं। यह सिरलेख सनातनी कवि के अंतर्गत प्रयोग होने वाले शास्त्रीय गायन रूपों के लिए ही नहीं अपितु लोक अंग की अलाहुणियां, घोड़ीयां शैलियों को भी राग, स्थाई, अन्तरा आदि के अनुसार निबद्ध करने का आदेश दिया गया है। इससे स्पष्ट है कि गुरमति संगीत में इस परम्परा के संस्थापक और प्रचारकों ने गुरमति संगीत की शैलियों को शास्त्रीय आधार प्रदान करवाया है। यह शास्त्रीय आधार भारतीय शास्त्रीय संगीत के उन नियमों और सिद्धान्तों की सहायता के साथ उत्पन्न हुआ है जो गुरमति संगीत के प्रयोजन की सिद्धि के लिए लाभकारी थे। उदाहरण के तौर पर कलात्मक प्रदर्शन, आडम्बर और आर्कषण के प्रयोग से होने वाले शास्त्रीय संगीत के गायन तत्वों को गुरमति संगीत में कोई स्थान नहीं दिया गया और न ही इनके सम्बन्ध में कोई संकेत या हवाला उपलब्ध होता है। बल्कि इस किस्म के आडम्बर का खंडन किया है।

—इकि गावत रहे मनि सादु न पाई ॥
हउमै विचि गावहि विरथा जाई ॥[31]
—इकि गावहि राग परीआ रागि न भीजई ॥
इकि नचि नचि पूरहि ताल भगति न कीजई ॥[32]

गुरु साहिब ने उपरोक्त अनुसार सिरजत परम्परा को केवल लिखित या सैद्धान्तिक रूप तक ही सीमित नहीं किया बल्कि इसको भिन्न-भिन्न कीर्तन शैलियों के रूप में नित्या प्रति और जीवन के अलग-अलग रस्मों, उत्सवों, अवसरों और मौसमों आदि में बाकाईदा गाने की परम्परा का व्यवहारिक रूप में प्रचलन किया। गुरु साहिब ने इन कीर्तन शैलियां को खुद गाया, कम्बी और साधारण सिक्ख संगतों से गवाया और कलयुग में कीर्तन को प्रधान दर्जा देते हुए इसको सिक्खी जीवन का अनिखड़ अंग बना दिया जिनका आज तक प्रचलन है। यही कारण है कि यह कीर्तन शैलियां सीना-ब-सीना हमारे पास पहुँचती हैं। इन कीर्तन शैलियों का शास्त्रीय अध्ययन, पहचान और स्वरूप की स्थापित का उपरोक्त यत्न विषय की सीमा को मुख्य रखकर संक्षिप्त रूप में ही किया गया है वरन् यह विषय गम्भीर खोज और विस्तृत अध्ययन की मांग करता है।

1. पंजाबी साहित कोश (भाग प्रथम) पृ. 30
2. गुरू छंद दिवाकर पृ. 43
3. आदि ग्रंथ, पृ. 262
4. .....वही....., पृ 1273
5. .....वही....., पृ. 1012
6. हरबंस सिंह (प्रो.). गुरू नानक देव दी काबि कला, पृ. 234-35
7. आदि ग्रंथ, पृ. 54-55
8. बंधोपाध्याय श्री पद, संगीत भाषय, पृ. 206
9. चौधरी विमलाकांत राय, भारतीय संगीत कोश, पृ. 70
10. महान कोश, पृ. 740
11. चौधरी विमलकांत राय, भारतीय संगीत कोश, पृ. 70
12. श्री मानवली रामकृष्ण कवि, भरत कोश, पृ. 344
13. नरुला, दर्शन सिंह (डा.) गुरबाणी संगीत बारे, पृ. 76
14. भाई काहन सिंह नाभा, महान कोश, पृ. 747

15. आदि ग्रंथ, पृ. 1296
16. ·····वही·····, पृ. 1341
17. ·····वही·····, पृ. 1200
18. भाई काहन सिंह नाभा, गुरू छंद दिवाकर, पृ. 82
19. चौधरी विमलाकांत राय, भारतीय संगीत कोश, पृ. 70
20. मलार महला १, आदि ग्रंथ, पृ. 1273
21. बृहत हिन्दी कोश, पृ. 464
22. गुरू छंद दिवाकर, पृ. 187
23. श्री गुरू ग्रंथ कोश, पृ. 333
24. पंजाबी कोश (दूसरा भाग), भाषा विभाग, पृ. 433
25. भाई काहन सिंह नाभा, महान कोश, पृ 85
26. वेदी सोहिन्द्र सिंह, पंजाबी लोक धारा विशव कोश, पृ. 258
27. भाई वीर सिंह, गुरमति संगीत पर अब तक मिली खोज (भाग चौथा), पृ. 141
28. गीता पंतल, पंजाब की संगीत परम्परा, पृ. 43
29. भाई वीर सिंह, श्री गुरू ग्रंथ कोश, पृ. 744
30. गिल, महिन्द्र कौर, आदि ग्रंथ लोक रूप, पृ. 86
31. गउड़ी गुयारेरी महला 3, आदि ग्रंथ, पृ. 158
32. सलोक महला 3 (पउड़ी), ·····वही·····, पृ. 1285

नोट :- गुरमति संगीत की उक्त शैलियों की क्रियात्मक सरूप की स्वर लिपि अंकिता नं. 2 में देखें।

गुरमति संगीत में प्रचलित कीर्तन चौकीयां

गुरमति संगीत में प्रचलित कीर्तन चौकीयां

सिक्ख धर्म का केन्द्र गुरद्वारा साहिबान है और इनमें होने वाली कीर्तन परम्परा निरन्तर विकास अधीन कार्यशील है। यहां नित्य-प्रति होने वाली कीर्तन परम्परा अब स्थापित रूप ग्रहण कर चुकी है और अलग-अलग समय पर होने वाली कीर्तन प्रस्तुतियों को भिन्न-भिन्न चौकीयां का नाम दिया जाता है। दरबार साहिब श्री हरिमन्दिर साहिब तख्त साहिबान अथवा और ऐतिहासिक गुरद्वारों के प्रसंग में देखें तो इन चौकीयों को एक विशिष्ट परम्परा विद्यमान है। इससे पहले कि हम भिन्न-भिन्न चौकीयां का अध्ययन करें, यह जान लेना आवश्यक है कि चौकी से क्या भाव है ?

गुरमति संगीत में चौकी चार कीर्तनी सिहों के जत्थे को कहा जाता है। भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार, 'चौकी से भाव चार पावे अर्थात कीर्तन के चार अंग हैं जो कीर्तन करने वाले को पूरे करने होते हैं।[1] गुरमति संगीत परम्परा में चौकीयां की गिनती के लिए विद्वानों में मतभेद हैं। भाई काहन सिंह नाभा के अनुसार चौकीयां की गिनती चार,[2] भाई वीर सिंह जी ने पांच, भाई कृपाल सिंह जी ने पन्द्रह[3] मानी हैं पर गुरमति संगीत पद्धति में आसा की वार की चौकी, बिलावल की चौकी, सो दरु की चौकी, आरती की चौकी यह चार चौकीयां ही प्रचलित हुई हैं। इन चौकीयों में कीर्तन आरम्भ करने से पहले संगीतमय माहौल पैदा करने के लिए स्वर साज, बजाने वाला साजिंदा शान या लहिरा बजाता है जो भारतीय संगीत में नगमा से प्रसिद्ध है। फिर मंगला चरण के तौर पर चार ताल के ठेके में भारतीय संगीत में प्रचलित बड़ ख्याल की शैली की तरह 'डंडउत' या किसी भी शब्द का समय के राग में गायन करने की मर्यादा है। बाद में ध्रुपद, पड़ताल आदि विभिन्न शैलियों को विभिन्न तालों अधीन समय के अनुसार रागों में गायन करने की मर्यादा है। कीर्तन समाप्ति पर चौकी के साथ सम्बन्धित समय के राग में कोई श्लोक गायन करने के बाद वार की पउड़ी गाई जाती है। गुरमति संगीत में प्रत्येक चौकी की समाप्ति के समय अरदास करने की परम्परा है। इन कीर्तन

चौकीयों का गायन श्री हरिमन्दिर साहिब अमृतसर में गुरू साहिबान के समय से लेकर आजतक उसी तरह परम्परागत रुप में चल रहा है। श्री हरिमन्दिर साहिब के बिना आसा की वार की चौकी, सो दरु, आरती की चौकी तकरीबन प्रत्येक गुरद्वारे में गाई जाती है।

आसा की वार की चौकी का नाम श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज 'आसा की वार' से पड़ा। वार पंजाब के लोक संगीत का एक अटूट अंग है, जिसमें बहादुर योद्धा की लड़ाई, शूरवीरता को संगीतमय प्रस्तुति द्वारा पेश किया गया है। इसके गायक को 'ढाढी' कहा जाता है, जो वार को सम्बन्धित इलाकाई धुनों के अनुसार गायन करते हैं। वार वीर रस के साथ भरपूर होने के कारण इसका गायन बुलन्द आवाज में ज्यादा तर तार सप्तक में किया जाता है। वारों के गायन के लिए सारंगी और ढड का प्रयोग किया जाता है। ढड ऊपर चार मात्राओं के लोल गे, तिट, ता, गेता बजाये जाते हैं।

गुरबाणी अंतर्गत वारों में अध्यात्मिक मार्ग पर चलते समय उत्पन्न दुनियावी मोह माया, विषय-विकारों के साथ युद्ध का वर्णन है। इन वारों में सामाजिक सदाचारक कीमतों द्वारा अध्यात्मिक अनुभव का बोध करवाया है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में कुछ वारों को गुरू साहिबान के समय प्रचलित निश्चित धुनों से गायन करने के संकेत हैं जैसे :

—वार माझ की तथा सलोक महला १
मलक मुरीद तथा चन्द्रहड़ा सोहीया की धुनी गावणी।[4]
—गउड़ी की वार महला ५
राई कमालदी मोजदी की वार की धुनि उपरि गावणी॥[5]
—आसा महला १ वार सलोका नालि सलोक भी
महले पहिले के लिखे टुंडे असराजै की धुनी॥[6] आदि

इन वारों के गायन से सम्बन्धित धुनों के संकेत से वार की प्राचीनता और लोकप्रियता के बारे में पता चलता है। वारों के ऊपर लोक धुनों के साथ राग, घरु आदि संकेत सिरलेख रुप में विद्यमान हैं। इनका गायन करना कोई सहिज कार्य नहीं। आसा की वार को श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज टुंडे असराजै की वार की धुनी के संकेत के अनुसार और आसा राग में ही गाया जाता है। आसा की वार में

केवल श्लोक और पउड़ीयां ही नहीं बल्कि श्री गुरू रामदास जो के छके छंत को भी गायन करने की प्रथा है। आसा की वार में पहले छंत का राग आसा के अंतर्गत टकसाली ढंग जो परम्परागत रुप में प्रचलित है, यह एकताल या यके में निबद्ध है, गायन किया जाता है। छंत के गायन करने के बाद श्लोक का गायन बाजे वाला रागी आसा राग अधीन और ताल से स्वतंत्र होकर गायन करता है। श्लोक के गायन पर रागी जहां श्रोताओं को गुरबाणी का ज्ञान करवाता है वहां सम्बन्धित राग का स्वरुप भी स्पष्ट करता जाता है। यह श्लोक फिर बारी-बारी दोनों रागी पढ़ते हैं। फिर पउड़ी का तीनों रागी मिलकर मध्य लय पर तार सप्तक में गायन करते हैं। पउड़ी के लिए खास ताल, जो पउड़ी के लिए विशेष है इस ठेके के बोल हैं गे तिट, ता गेता। इसमें पहले 'गे' पर सम है। पउड़ी की अन्तिम तुक को विशेष रुप में तोड़ा मार कर मुकाया जाता है और तीसरी बार एक मात्रा बड़ा कर समाप्ति की जाती है।

'सो दरु दी चौकी' चौथे पहर में शाम के रागों में वंदना करने के बाद समय के साथ सम्बन्धित और शब्दों का गायन करने के उपरांत सो दरु का राग आसा में पउड़ी शैली में पउड़ी ताल (गे, तिट ता, गे ता) में गायन करने की परम्परा है। सिक्ख धर्म में रोज़ाना नित्य-नेम की बाणीयों में शाम के समय के रहिरास साहिब के पाठ की शुरुआत भी सो दरु के गायन करने से होती है। सो दरु के गायन करने के बाद रहिरास साहिब का पाठ किया जाता है। फिर अरदास करने पर इस चौकी की समाप्ति होती है।

'आरती की चौकी' में आरती का गायन किया जाता है। आरती भारतीय लोक धर्मों की प्रसिद्ध रीत है जिस अधीन थाल में धूप, दीप, चवर, फूल आदि वस्तुओं को डालकर आराधनामय गीतों के साथ इष्ट देव की आरती उतारी जाती है। आदि ग्रंथ में श्री गुरू नानक देव जी, रविदास, धन्ना और सैन जी की राग धनासरी और भक्त कबीर जी की राग प्रभाती अंतर्गत आरती दर्ज है। गुरबाणी के अनुसार बाकी धर्मों के साथ आरती भिन्न है। इसमें संसारिक वस्तुओं की जगह ब्रह्माण्ड में हो रही परमात्मा की आरती का चित्रण है। इतिहास को देखने से पता चलता है कि 1510-20 ईस्वी में जगननाथ पुरी के

मन्दिर में हो रही आरती को पाखंड मानते हुए गुरू नानक देव जी ने आरती की रचना की।[1]

गुरमति संगीत में प्रचलित ओर कीर्तन चोकीयां :- सिक्खों के ओर (ऐतिहासिक गुरुद्वारों में) तख्तों पर कीर्तन की आसा दी वार की चौकी, सो दरु, आरती की चौकी के विना ओर चौकीयां भी लगाई जाती हैं। श्री हरिमन्दिर साहिब अमृतसर में इन कीर्तन चौकीयां की परम्परा सभी से पुरातन और बडेरी है। गुरमति संगीत संबंधी अलग-अलग पुस्तकों के हवाले ग्रंथों से प्राप्त स्त्रोतों और दरबार साहिब श्री हरिमन्दिर साहिब की व्यवहारिक कीर्तन परम्परा से हमें निम्नलिखित कीर्तन चौकीयां मिलती हैं।

1 **तीन पहरे की चौकी :-** यह चौकी श्री हरिमन्दिर साहिब के किवाड़ खुलने से पहले रात के तीसरे पहर में लगाई जाती है, जिस में प्रभु दर्शन, गुरू दर्शन आदि के विषय के साथ सम्बन्धित शब्दों का गायन किया जाता था। ब्रह्म ज्ञानी बाबा शाम सिंह जी (125 वर्ष की उम्र थी) 78 वर्ष इस कीर्तन चौकी में सारिंदे साज के साथ हाजरी भरते रहे।

2 **बिलावल की चौकी :-** राग बिलावल के साथ सम्बन्धित 'बिलावल की चौकी' में राग बिलावल में शब्द और पउड़ी लगाने की परम्परा है।

3 **आनंद की चौकी :-** इस चौकी में पूर्व दुपहिर के रागों में शब्दों का गायन किया जाता है और अंत में समय के साथ सम्बन्धित राग में पउड़ी लगा कर चौकी की समाप्ति की जाती है। इसको 'सारंग की चौकी' भी कहा जाता है।

4 **चरन कंवल की चौकी :-** इस चौकी के अंतर्गत दुपहिर के रागों में गुरबाणी गायन की जाती है। इसको 'तिलंग की चौकी' भी कहा जाता है।

5 **कान्हड़े या कल्याण की चौकी :-** 'कान्हड़े या कल्याण की चौकी' और 'आरती की चौकी' सम्बन्धि सिक्ख संगीतकारों में मतभेद हैं। कुछ संगीत विद्वानों ने 'आरती की चौकी' और कान्हड़े या कल्याण की चौकी' को एक माना है पर कई 'आरती की चौकी' को अलग

और 'कान्हड़े या कल्याण की चौकी' को अलग दूसरी चौकी मानते हैं। इन चौकीयों में रात के दूसरे पहर के रागों में शब्द और पउड़ी लगाई जाती है।

6 **कीर्तन सोहिले की चौकी** :- सवा पहर रात गई पर 'कीर्तन सोहिले की चौकी' का गायन किया जाता है। इस चौकी के अंतर्गत समय के रागों अनुसार शब्दों का गायन करन उपरांत कीर्तन सोहिले का पाठ करने के पशचात अरदास की जाती है।

मौसमों (ऋतुओं) के साथ सम्बन्धित कीर्तन चौकीयां :- गुरमति संगीत परम्परा में कीर्तन के लिए ऋतु और महीने का भी विशेष महत्व है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में अंकित बारामाह में महीने के साथ सम्बन्धित शब्द का प्रत्येक महीने संगरांद के दिन में पाठ और गायन करने की प्रथा है। प्रकृति का मन के साथ अटूट सम्बन्ध होने पर कवि बारह महीनों में हुए ऋतु परिवर्तन को आधार मानकर उस प्रभु के विछोड़े में अपने मनोभावों को प्रकट करता है। यह कोई छंद जाति नहीं। किसी भी छंद में बारह महीनों का वर्णन होने के कारण यह संज्ञा हो जाती है।' श्री गुरू ग्रंथ साहिब में श्री गुरू नानक देव जी द्वारा रचित बारामाह राग तुखारी और श्री गुरू अर्जन देव जी का राग माझ अतर्गत बारामाह अंकित है। बारहमाह तुखारी में उस प्रभु के वियोग की पीड़ा का चित्रण है और अन्तिम छंत में यह वियोग पीडा, प्रभु के मिलाप, संयोग मे खुशी में परिवर्तित हो जाती है और बारहमाह माझ में भी मनुष्य के जीवन को दर्शाया हुआ अध्यात्मिक बोध के लक्ष्य को प्राप्त करने पर जोर दिया गया है। श्री गुरू नानक देव जी की रचना बारहमाह छंत रूप में है और श्री गुरू ग्रंथ साहिब में दर्ज दोनों बारहमाह में गायन के विशिष्ट विधान के लिए रहाओ जैसे संकेत नहीं हैं।

बसंत ऋतु में राग बसंत का विशेष स्थान है। गुरमति संगीत परम्परा में माघो की संगराद के दिन श्री हरिमन्दिर साहिब में हैड ग्रंथी साहिब रागी सिंहों को फूल भेंट करके बसंत राग खोलने की बेनती करते हैं। इस दिन से हर कीर्तन चौकी में बसंत राग खुशी का भरा, खेड़ा लाने वाला राग है पर इसको इन दिनों में चाहे कोई खुशी हो या गमी, हर समागम पर बसंत राग में शब्द और पउड़ी

लगाने की मर्यादा है। बसंत राग के गायन करने की यह प्रक्रिया होले महल्ले तक इस तरह ही जारी रहती है और इन दिनों में सारंग राग बिल्कुल नहीं गाया जाता। यदि कोई गायक (कीर्तनकार) कीर्तन के समय बसंत राग में शब्द गायन नहीं करता तो वह रागी कितना संगीत विद्वान हो क्यों न हो उस बारे यही कहा जाता है कि इसने गुरबाणी संगीत की परम्परागत शिक्षा नहीं ली। बसंत राग की प्रत्येक कीर्तन चौकी में गायन करने की समाप्ति के लिए विशेष परम्परा है। होले महल्ले वाले दिन आनन्दपुर साहिब में 'आसा दी वार' के कीर्तन उपरांत बसंत राग की पउड़ी लगा कर 'आसा दी वार' और बसंत राग की समाप्ति के लिए अरदास की जाती है और इस तरह राग बसंत का गायन अगामी वर्ष तक बंद किया जाता है। फिर गुलाल खेलते हुए होले महल्ले का जलूस निकाला जाता है और होली के शब्दों का गायन किया जाता है।

सावन महीने में मल्हार राग का राज होता है। इसका आरम्भ सावन की संग्राद के दिन किया जाता है और सारा महीना बसंत राग की तरह हर कीर्तन चौकी में मल्हार राग में शब्द और पउड़ी लगाने की परम्परा है।

उपरोक्त कीर्तन चौकीयों के इलावा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अंकित विभिन्न गायन रुपों के आधार पर सामाजिक जीवन से सम्बन्धित भिन्न-भिन्न अवसरों पर भी कीर्तन करने की परम्परा है जिनकी व्यवहारिक परम्परा को आगे विचार रहे हैं।

सिक्ख समाज में विशेष अवसरों से सम्बन्धित कीर्तन चौकीयां :

गुरमति संगीत की व्यवहारिक परम्परा सिक्ख धर्म में आस्था रखने वाले लोगो के जीवन के साथ पूर्ण तौर पर जुड़ी हुई है। सिक्खी जीवन के आरम्भ (जन्म) से लेकर अंत (मौत) तक अलग-अलग रस्मां रीतां शब्द कीर्तन के साथ सुसज्जित हैं। जीवन की प्रत्येक घड़ी हर पल जहां उस परमात्मा को ध्याने का और निरमोल कीर्तन द्वारा हरी जस का आदेश सिक्ख जगत को है वहां जीवन के प्रत्येक अवसर पर बाणी द्वारा जीव को उपदेश दिया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी को सामाजिक जीवन के प्रसंग में देखें तो सहिज

रूप में ही पता चल जाता है कि गुरू साहिबान हमें हमारे सभ्याचारक जीवन का अध्यात्मिक बदल दे रहे हैं। इस तरह प्रत्येक जीवन घटना और कार व्यवहार सम्बन्धि हमें गुरबाणी में शब्द मिल जाते हैं जिनका निर्धारित विधि और परम्परा के अनुसार गायन किया जाता है। गुरमति संगीत की यह परम्परा है कि खुशी और गमी (शोक) की रस्म निर्धारित शब्द कीर्तन द्वारा सम्पन्न की जाये। गुरमति संगीत के निपुन्न गायक इस समय शास्त्रीय और लोक अंग की विभिन्न शैलियां का गायन करते आ रहे हैं जिनकी एक स्थापित परम्परा है। इन अलग-अलग गायन शैलियां का अध्ययन सिक्ख समाज के प्रसंग में हम आगे कर रहे हैं।

सामाजिक जीवन के साथ सम्बन्धित कीर्तन परम्परा :

जन्म समय की कीर्तन परम्परा—सिक्ख धर्म में परमात्मा के रुप में दी गई दात का भरपूर शुकराना किया जाता है और इस अवसर पर शब्द कीर्तन द्वारा उस परमात्मा का कोटि-कोटि धन्यवाद किया जाता है। इस अवसर पर शुकराने-बखशिश के शब्दों के अतिरिक्त बच्चे के जन्म के साथ सम्बन्धित शब्दों का गायन किया जाता है जैसे—

—पूता माता की आसीस ॥
निमख न बिसरउ तुम कउ हरि हरि
सदा भजहु जगदीश ॥ १ ॥[9]
—कैहा कंचनु तुटै सारु ॥
अगनी गंढु पाई लोहारु ॥
गोरी सेती तुटै भतारु ॥[10]
—पुंती गंदु पवै संसारि ॥[11]
गुझी छंनी नाही बात ॥
गुरू नानक तुठा कीनी दाति ॥ ४ ॥ ७ ॥[12]

आदि। यह परम्परा अब स्थापित हो चुकी है और इसका गायन जरूरी समझा जाता है।

कुड़माई और मिलनी के समय की कीर्तन परम्रा-लड़के-लड़की को विवाह के लिये कुड़माई की रस्म के समय रागी सिंहों द्वारा और

शब्दों के अतिरिक्त :

—सतु संतोखु करि भाउ
कुड़मु कुड़माई आइया वलि राम जीउ ॥[13]

शब्द का गायन किया जाता है। जब लड़के वाले लड़की को विवाह के लिए लड़की के घर जाते हैं तो मिलनी के समय लड़की वाले कहते हैं :

"हम घरि साजन आये साचै मेलि मिलाये"[14] शब्द बिना साज के गायन करने की परम्परा है।

आनंद कार्ज :- गुरमति संगीत परम्परा में विवाह की रस्म का भी अपना अलग रुप है। विवाह की संपूर्ण रस्म को 'आनंद कार्ज' नाम के साथ संबोधित किया जाता है। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में श्री गुरू रामदास जी द्वारा रचित ऐसे छंतों की रचना मिलती है।[15] जिनका सिक्ख धर्म में विवाह की रस्म के समय उच्चारण के साथ परिक्रमा लेकर रस्म पूर्ण होती है। सिक्ख जगत् में छंतों को लांव नाम के साथ संबोधित किया जाता है पर बाणी में लांव सिरलेख नहीं है। इन छंतों की लांव क्रम के साथ आरम्भ और समाप्ति होती है। इनमें पति पत्नी के रूपक से जीवात्मा और परमात्मा के मिलने से सम्बन्धित भावों का चित्रण किया गया है।

विवाह की रस्म श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी की हजूरी में संगत के सामने की जाती है। इसमें सबसे पहले 'आसा दी वार' का कीर्तन होता है, इसके पश्चात् कार्ज को पूर्ण करने के लिए परमात्मा आगे अर्ज या वेनती के रूप में :

—कीता लोड़ीअै कंमु सु हरि पहि आखीअै ॥
कारजु देइ सवारि सतिगुर सचु साखीअै ॥[16]

शब्द का गायन किया जाता है। लड़की के पिता लड़की के हाथ में पल्ला पकड़ाते हैं तो उस सयय :

"उसतति निंदा नानक जी
मैं हभ कवाइ छोड़िआ
हभु किछु तिआगी ॥
हभे साक कुड़ावे डिठे।
तऊ पलै तैंडै लागी ॥ १ ॥[17]

शब्द गाया जाता है। इन शब्दों के अतिरिक्त समय अनुसार और उस समय के रागों में निम्नलिखित शब्दों का गायन किया जाता है :

—गाउ गाउ री दुलहनी मंगलचारा।
मेरे गृह आये राजा राम भतारा ॥ ११ ॥[18]
—इहु मनु सुंदरि आपणा हरिनामि मजीठै रंगि री ॥
तिआगि सिआणप चातुरी तू जागु गुपालहि संगि री ॥ १ ॥[19]
—ना मैं रूपु न बंके नैणा ॥
नु कुल ढंगु न मीठै बैणा ॥ १ ॥[20] आदि

इसके पशचात लावां का पाठ होता है श्री गुरू ग्रंथ साहिब में भाई साहिब पहले एक लाव पड़ते हैं जो विहंदड जोड़ी ग्रंथ साहिब की हजूरी में बैठ कर ध्यान के साथ सुनते हैं। फिर कीर्तनीयें उस लांव को गा कर पड़ते हैं और इस दौरान नव-विवाहित जोड़ी श्री गुरू ग्रंथ साहिब की परिक्रमा पूरी करती है। इस तरह वारी-वारी लावां पड़ी जाती हैं और श्री गुरू ग्रंथ साहिब की चार ही परिक्रमा ली जाती हैं। इसके उपरांत 'आनंद साहिब' का भी गायन किया जाता है। आनंद साहिब के गायन करने के बाद 'वीवाहु होआ मेरे बाबूला'[21] शब्द का गायन करके समाप्ति के लिए अरदास की जाती है। इन तरह यह "आनंद कार्ज" की रस्म पूर्ण होती है।

मृत्यु उपरांत रस्मों के समय की कीर्तन परम्परा :- गुरमति संगीत में प्रत्येक खुशी, गमी के मौके पर परमात्मा के गुण गायन करने और मन में वसाने की परम्परा है। इस तरह प्राणी की मृत्यु पर जब तक देह है, मारु राग में शब्द और मारु की वार का गायन किया जाता है बाद में देह का संस्कार करने के बाद वडहंस राग की खास करके अलाहुणियां गायन करने का आदेश है। इसके उपरांत श्री गुरू ग्रंथ साहिब जो के पाठ का भोग पाया जाता है और समय के निर्धारित रागों में मौके अनुसार शब्दों का गायन किया जाता है। उदाहरण के तौर पर :—

—जगत महि झूठी देखी प्रीति ॥
अपने ही सुख सिउ सभ लागे
किआ दारा किआ मित ॥[22]

—किआ तू सोइआ जागु.इआना।
तै जीवनु जगि सचु करि जाना।[23]
—रामु सिमरि रामु सिमरि इहै तेरे काजि है।
माइआ को संगु तिआगु प्रभ जू की सरनि लागु॥
जगत सुख मानु मिथिआ झूठो सभ साजु है॥ १॥[24]
—नांगे आवनु नांगे जाना॥
कोई न रहि है राजा राना॥[25]
—बहु परपंच करि पर धनु लिआवै॥
सुत दारा पहि आनि लुटावै॥ १॥
मन मेरे भूले कपटु न कीजै॥
अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै॥ १॥[26]

आदि। इन शब्दों में संसार की नाशमानता, अनमोल मनुष्य रुपी जीवन में अच्छे कर्म करने, अंत के समय याद रखने और सामाजिक कार व्यवहार करते समय माया की ओर से उपराम होकर परमात्मा को याद करने का सन्देश है। इन शब्दों के गायन करने के उपरांत श्री आनंद साहिब का गायन करके समाप्ति की जाती है।

उपरोक्त उल्लेख से स्पष्ट है कि उक्त चौकीयां अलग-अलग रागों पर ही आधारित थीं जिनमें इन रागों के अनुसार शास्त्रीय अंदाज में गुरमति गायन विधि के अनुसार कसबी मुहारत के साथ गायन की एक विशाल परम्परा मौजूद रही है। यह चौकीयां गुरमति संगीत की व्यवहारिक परम्परा में प्रयोग होने वाले भारतीय शास्त्रीय संगीत के तत्वा का स्पष्ट प्रमाण और साक्षात स्वरुप हैं।

यह चौकीयां रागों के नामों के अनुसार और रागों के समय पर आधारित हैं। इन चौकीयां में सम्बन्धित समय के रागों पर शब्द और पउड़ी लगाई जाती है पुरातन रागी सिंह इन कीर्तन चौकीयां को शुद्ध परम्परा अनुसार लगाते थे, जो उच्चकोटि के कसबी कलाकार थे। इस बारे भाई कृपाल सिंह जी अपने लेख 'श्री हरिमन्दिर साहिब की कीर्तन चौकीयां' में लिखते हैं, 'पुरातन समय चौकी के आरम्भ में पहला शब्द गहरे राग में आलाप सहित गाया जाता था। शेष शब्द रागी सिंह मौके के अनुसार अपनी मर्जी के सरल रागों

में गाते थे पर आजकल रागी सिंह इस मर्यादा को पूरा नहीं कर रहे। पुरातन समय रागी सिंह हर राग को उसके समय के अनुसार गाते थे जैसे 'आसा दी वार' अमृत और शाम को सो दरु के आरम्भ में "सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा" वाला शब्द आसा राग में गाया जाता था। आजकल के कुछ नये रागी सिंह इस मर्यादा की पालना नहीं कर रहे। पुरातन समय श्री हरिमन्दिर साहिब के रागी और रबाबी संगीत के महान आचार्य होते थे। बजुर्ग कहते हैं कि भारत भर के संगीतकार श्री हरिमन्दिर साहिब के रागियों या रबाबियों के साथ मुकाबला करने से झिझकते थे पर आजकल ऐसा नहीं।'[22]

कीर्तन चौकीयों से सम्बन्धित उपरोक्त विवरण से स्पष्ट है कि उक्त चौकीयां अलग-अलग रागों पर आधारित थीं जिन में रागों अनुसार शास्त्रीय अंदाज में गुरमति गायन विधि अनुसार कस्बी महारत साथ गायन की एक विशाल परम्परा मौजूद रही है। इन कीर्तन चौकीयों का क्रियात्मक पक्ष अभी ओर विस्तृत अध्ययन की मांग रखता है जिसमें गुरमति संगीत से सम्बन्धित ओर कई सिद्धांत, विस्तार और पुरातन संगीतक तत्व उपलब्ध होने की आस है।

1. **गुरशब्द रत्नाकर-महान कोश**, पृ. 449
2. ……वही……, पृ. 463
3. **स्मृति ग्रंथ, अद्वुति गुरमति संगीत सम्मेलन**, 1991, पृ. 17
4. **आदि ग्रंथ** पृ. 137
5. ……वही……, पृ. 318
6. ……वही……, पृ. 462
7. प्यारा सिंह पदम, **आदि ग्रंथ का संगीत प्रबंध**, नानक प्रकाश पत्रिका, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला
8. भाई काहन सिंह नाभा, **गुरू छंद दिवाकर**, पृ. 160
9. गूजरी महला ५, **आदि ग्रंथ**, पृ. 496
10. वार माझ की सलोक महला १, **आदि ग्रंथ**, पृ. 143
11. आसा महला ५, ……वही……, पृ. 396
12. रागु सूही महला ४, ……वही……, पृ. 773
13. रागु सूही महला १, ……वही……, पृ. 764
14. सूही महला ४, ……वही……, पृ. 773-74

15. सिरी राग की वार महला ४, सलोक महला १, पउड़ी, आदि ग्रंथ, पृ. 91
16. सलोक म: ५, ·····वही·····, पृ. 963
17. आसा कबीर जीउ, ·····वही·····, पृ. 482
18. आसा महला ५, ·····वही·····, पृ. 400
19. रागु सूही अष्टपदीयां महला १, ·····वही·····, पृ. 750
20. सलोक महला ५, ·····वही·····, पृ. 963
21. देवगंधारी महला ९, ·····वही·····, पृ. 536
22. रागु सूही वाणी श्री रविदास जीउ की, ·····वही·····, पृ. 794
23. रागु जैजावंती महला ९, ·····वही·····, पृ. 1352
24. भैरउ कबीर जीउ, ·····वही·····, पृ. 1157-58
25. सोरठि कबीर जीउ, ·····वही·····, 656
26. समृति ग्रंथ, अदूति गुरमति संगीत सम्मेलन, 1991, पृ. 18

●●●